RNI No. 7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 62 अंक : 03 प्रकाशन तिथि : 25 फरवरी कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 मार्च 2025
शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

कर लिये केशरिया रे जवानी की होली जलती।।
आज संघ का शंख बजा है घर घर में आह्वान।
देखें किसे साधना प्यारी किसके तन में जान।
जिन्दगी साँचों में ढलती।।
कर लिये केशरिया रे जवानी की होली जलती।।

Scanned with OKEN Scanner

Manufacturer of Mattresses : Sofa Set & Furniture

Vision Comfort Line+ Mattress

स्प्रिंग मैट्रेस

HARSH CORPORATIONS

68 Giriraj Nagar, Govindpura, Kalwar Road, Jaipur +91 97173 59655

Nanda Sales

"AA" Class Govt. Contractor PHED & JDA

SPECIALIST IN ALL WATER PIPELINE PROJECT, BUILDING, ROAD WORK

Nand Kishor (Ashok Swami)
Durga Lal

Mob. +91 9314054800,
+91 9314517014
Phone : 0141-2225982
Email : nanda4800@yahoo.com

Shop No. 24 Ambay Market, Ajmer Road, Jaipur

Scanned with OKEN Scanner

संघशक्ति

4 मार्च, 2025

वर्ष : 62 अंक : 03

-: सम्पादक :-

राजेन्द्र सिंह राठौड़

शुल्क – एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय – सूची

समाचार संक्षेप		04
चलता रहे मेरा संघ	श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर	06
पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)	श्री चैन सिंह बैठवास	07
धर्म के कंटकाकीर्ण मग पर....	रेंवतसिंह पाटोदा	10
खंडहर बता रहे वैभव की गाथा	डॉ. मातुसिंह मानपुरा	12
'तन' के मन की व्यथा	स्वरूपसिंह बांवरला	14
राम प्रसाद बिस्मिल थे तंवर राजपूत	युधिष्ठिर	19
संघ के प्रति अनन्य भाव	रतन कंवर सेतरावा	22
वैभव से वैराग्य	राजेन्द्र सिंह बोबासर	23
क्रोध पर विजय	गंगासिंह साजियाली	25
सभी समस्याओं का समाधान-ईश्वर प्रेम	रश्मि रामदेरिया	26
अमर पहुँचा अमरापुर	अजीतसिंह कुणघेर	28
आओ! कुछ चिन्तन करें	भंवर सिंह मांडासी	30
आधुनिक समाज में आस्था का क्षरण:	जितेन्द्र सिंह देवली	32
अपनी बात		34

समाचार संक्षेप

पूज्य श्री तनसिंह जी की 101वीं जयन्ती पर स्मारक का लोकार्पण :– 25 जनवरी को श्री क्षत्रिय युवक संघ के संस्थापक पूज्य श्री तनसिंह जी की 101वीं जयन्ती के अवसर पर बाड़मेर में गेहूँ रोड़ स्थित आलोक आश्रम में पूज्य श्री तनसिंह जी के नवनिर्मित स्मारक का लोकार्पण एवं प्रतिमा का अनावरण समारोह पूर्वक किया गया। इस अवसर पर अपने उद्बोधन में माननीय संरक्षक श्री भगवान सिंह जी रोलसाहबसर ने फरमाया कि जब जब इस संसार में ईश्वरीय व्यवस्था में बाधा उत्पन्न होती है, धर्म का क्षय होने लगता है, तब क्षत्रिय ही पुनः धर्म की व्यवस्था स्थापित करते आये हैं। वर्तमान काल में भी जब असंतोष तथा अराजकता की स्थिति बढ़ने लगी। क्षत्रिय अपने पथ से विचलित होने लगे। नैतिक मूल्यों का पतन होने लगा। समाज व्यवस्था बिखरने लगी तब पूज्य तनसिंह जी ने श्री क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना कर क्षात्र-धर्म का मार्ग प्रशस्त किया। यह स्मारक हमारी अंत: प्रेरणा को जगायेगा तथा धर्म पथ पर चलने की प्रेरणा देगा।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के संघ प्रमुख श्री लक्ष्मणसिंह जी बेण्याकाबास ने अपने उद्बोधन में कहा कि पूज्य तनसिंह जी की दिव्यता का साकार रूप है श्री क्षत्रिय युवक संघ। महाराणा प्रताप, दुर्गादास आदि का स्मरण हम सब करते हैं लेकिन महाराणा प्रताप, दुर्गादास आदि बनाने का मार्ग कौनसा हो सकता है, वह मार्ग है श्री क्षत्रिय युवक संघ का मार्ग। यदि हम अपना विश्वास एवं श्रद्धा इस मूर्ति में आरोपित कर दें तो यह हमारे लिए साक्षात् तनसिंह जी बनकर प्रेरणा प्रदान करेगी।

संघ के वरिष्ठ स्वयंसेवक श्री महावीर सिंह सरवड़ी ने पूज्य तनसिंह जी का जीवन परिचय देते हुए कहा कि आज वे भौतिक रूप में हमारे साथ नहीं हैं पर सूक्ष्म रूप से हमारे हृदयों में विराजमान होकर हमारा मार्गदर्शन कर रहे हैं।

तारातरा मठ के महन्त प्रताप पुरी जी ने कहा कि कर्तव्यबोध से सारी समस्याएँ हल होती हैं तथा पूज्य तनसिंह जी ने श्री क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना कर समाज को कर्तव्यबोध का पाठ पढ़ाया।

वरिष्ठ स्वयंसेविका जागृति बा हरदासकाबास ने कहा कि बालिकाएँ समाज की नींव, उन्हें संस्कारवान बनाने का काम संघ कर रहा है।

पारसोली में सामूहिक यज्ञ व विशेष शाखा आयोजन :– श्री क्षत्रिय युवक संघ के चित्तौडगढ़ प्रान्त में पारसोली में विशेष शाखा का आयोजन 12 जनवरी को किया गया। संघ के केंद्रीय कार्यकारी श्री गंगासिंह साजियाली के निर्देशन में सामूहिक यज्ञ का आयोजन हुआ। परिचय सत्र के पश्चात साजियाली ने बताया कि इस विशेष शाखाओं के आयोजन का उद्देश्य है संघ दर्शन को घर-घर तक पहुँचाना।

श्यामपुरा (हरियाणा) में प्रशिक्षण शिविर:– हरियाणा के महेन्द्र गढ़ जिले के गाँव श्यामपुरा में श्री क्षत्रिय युवक संघ के प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन 11 से 14 जनवरी तक आयोजित किया गया। शिविर में आस-पास के गाँवों के 50 शिविरार्थियों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। संघ के सीकर प्रान्तप्रमुख जुगराज सिंह जुलियासर ने शिविर संचालन किया। उन्होंने शिविरार्थियों को संबोधित करते हुए कहा कि तपस्या एवं संकल्प शक्ति के बल पर समाज

जागरण किया जा सकता है। शिविर के अभ्यास में जो बातें आपने सीखी हैं उन्हें अपने जीवन में ढालें तथा पूज्य तनसिंह जी के संदेश को घर-घर तक पहुँचाएँ।

महाराणा सांगा की पुण्यतिथि पर वर्चुअल कार्यक्रम :- श्री क्षत्रिय युवक संघ के आनुषांगिक संगठन श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाऊण्डेशन ने 30 जनवरी को महाराणा सांगा की पुण्यतिथि पर वर्चुअल कार्यक्रम का आयोजन किया। इतिहासविज्ञों ने राणा सांगा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला।

रक्तदान शिविर का आयोजन :- पूज्य -श्री तनसिंह जी की जयन्ती के उपलक्ष में प्रताप युवा शक्ति ने 19 जनवरी को संघशक्ति भवन में एक विशाल रक्तदान शिविर का आयोजन किया। शिविर में युवाओं ने उत्साह- पूर्वक भाग लिया तथा 400 यूनिट रक्त एकत्रित किया। शिविर में स्वास्थ्य परीक्षण की भी व्यवस्था थी जिसमें दंत रोग एवं हृदय रोग सम्बन्धी परामर्श दिया गया।

अन्य समाचार :- कोटा में राजपूत कर्मचारी स्नेह-मिलन कार्यक्रम- 19 जनवरी, कोटा क्षेत्र के राजपूत कर्मचारियों का मिलन शकुन मैरिज गार्डन में रखा गया। शिक्षा के महत्त्व, सामाजिक कुरीतियाँ संस्कार निर्माण आदि विषयों पर चर्चा की गई। श्री सुरेन्द्र सिंह सान्दरसर ने पूज्य तनसिंह जी का जीवन परिचय दिया तथा श्री क्षत्रिय युवक संघ द्वारा किये जाने वाले संस्कार निर्माण के कार्यों की जानकारी दी।

महाराणा प्रताप की प्रतिमाओं का अनावरण:- दिनांक 19 जनवरी महेन्द्र गढ़ (हरियाणा) में महाराणा प्रताप की मूर्ति का अनावरण किया। कार्यक्रम में वक्ताओं ने महाराणा प्रताप के स्वतंत्रता प्रेम की प्रशंसा की। उन्हें साहस, त्याग, वीरता की साक्षात् मूर्ति बताया। 25 जनवरी को धौलपुर में भी महाराणा प्रताप की मूर्ति का अनावरण किया गया। कार्यक्रम में राजस्थान व मध्यप्रदेश के गणमान्य नेताओं सहित विशाल जन समूह ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

19 जनवरी को बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय में क्षत्रिय विद्यार्थियों का सम्मेलन हुआ। सम्मेलन में समाज में व्याप्त कुरीतियों के साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में समाज के साथ व्यवस्थागत भेदभाव व उपेक्षा पर भी चर्चा हुई। कार्यक्रम में श्री क्षत्रिय युवक संघ का परिचय दिया गया एवं संस्कार निर्माण के लिए संघ के शिविर का प्रस्ताव रखा गया। ❍

यदि तुम डरते हो तो किससे? यदि तुम ईश्वर से डरते हो तो मूर्ख हो। यदि तुम मनुष्य से डरते हो तो कायर हो। यदि तुम क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर नामक पंचभूतों से डरते हो तो उनका सामना करो। यदि तुम अपने आप से डरते हो तो अपने आपको पहचानो और कहो कि मैं ही ब्रह्म हूँ।

- स्वामी रामतीर्थ

चलता रहे मेरा संघ

(मावनीय भगवान सिंह जी रोलसाहबसर के मेवाड़ क्षेत्र के प्रवास के समय एक स्थान पर दिए उद्‌बोधन का संक्षेप)

गीता आप लोगों ने पढ़ी होगी, पढी नहीं है तो किसी से सुनी होगी। गीता के विचार सुने होंगे। गीता हमारा एक आदर्श ग्रन्थ है। उसमें कोई कहानी नहीं है। पूरे जीवन के सूत्र हैं कि हमें क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए। युद्ध के मोके पर गीता में ही अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण से पूछा कि यह मन हवा की गति से भी तेज चलने वाला है। इसको कैसे रोका जाए? आपने कहा न कि हम दौड़ रहे हैं। तो हम दौड़ रहे हैं, शरीर नहीं दौड़ रहा है, दौड़ने वाला मन है। और यह ही हमको दौड़ाता है। हम मन के अधीन हैं, स्वस्थ नहीं हैं। इसको कैसे रोका जाए?

यह प्रश्न था अर्जुन का और दो छोटे से शब्द थे भगवान श्रीकृष्ण के सुझाए हुए। अभ्यास और वैराग्य। वैराग्य का नाम सुनते ही हमको यों लगता है जैसे कोई भगवां वस्त्र पहने हुए या दाढी, जटा-जूट बढ़ाए हुए या बिल्कुल सफाचट मुण्ड और जंगल में रहने वाले। मांग कर खाने वाले। पर वैराग्य का अर्थ तो है कि जहाँ हमारा राग है, उससे विमुख हो जाना। जिन विषयों का हम चिन्तन करते हैं, उनसे आसक्ति हो जाती है। यह आसक्ति ही राग है। उनसे वैराग हो जाए, उनसे विमुख हो जाएँ, जो हमारे पतन का कारण बनते हैं। चाहे 10-12 साल का बच्चा-बच्ची हैं, चाहे 60-80 साल के बुजुर्ग हैं, सब जानते हैं कि हमसे कहाँ-कहाँ गलती होती है और कहाँ-कहाँ गलती होने की सम्भावना है। कभी-कभी हम दृढ-निश्चय भी करते हैं कि ऐसा हम नहीं करेंगे। पर थोड़े दिनों में धीरे-धीरे हमारा निश्चय ढीला हो जाता है। निश्चय पर बने रहना कठिन है। वैराग्य का अर्थ न तो घर छोड़ना है, न संसार छोड़ना है, न कोई वस्तु छोड़ना है। उनमें उलझना नहीं है, उनके बंधन में नहीं जाना है। मिल जाए तो ठीक, न मिले तो भी ठीक। मिल जाए तो भगवान की कृपा है, न मिले तो भी भगवान की ही कृपा है, यही मेरे लिए आवश्यक था, हित में था। मारवाड़ में एक कहावत है- 'गुरु महाराज हैंग हावळ कर ही', जो हो रहा है वह गुरु महाराज ठीक ही कर रहे हैं। अच्छा हो रहा है तब भी और बुरा हो रहा है तब भी भाव यही रहे कि यही मेरे हित में है। यह संतोष आ जाए तो वैराग ही है।

यह संतोष तब तक नहीं आता जब तक मन की दौड़ है। मन की दौड़ रुकती है अभ्यास से। श्री क्षत्रिय युवक संघ की शाखा में जो जाता है, शिविर में जो जाता है, वह गीता की इस बात को समझने का प्रयास करता है और अभ्यास में उत्साहपूर्वक लग जाता है। संघ की पूरी गतिविधि अभ्यास ही है। शिविर में कष्ट सहन करता है, कष्ट सहने का यह अभ्यास बड़ा मूल्यवान है। बड़ा महत्त्वपूर्व है। जो दुख पाकर मिला है वह पर्याप्त से कहीं अधिक है। वह उसका पुनः अभ्यास करेगा, पुनरावर्ती करेगा। संघ में संस्कार निर्माण किया जाता है, उसका आधार यह अभ्यास ही है। क्षत्रिय युवक संघ की शाखा में प्रारम्भ में ही बता दिया जाता है कि निरंतरता और नियमितता का क्या महत्त्व है। स्वयंसेवक उसी को अपनाता है। नियमितता का अर्थ है नियमित रूप से करना और निरन्तरता का अर्थ है किसी भी प्रकार से बिना चूके रोजाना कार्य करना। यह बड़ा कठिन है। संसार में अनेक कठिन कार्य हैं, पर निरन्तरता अत्यन्त कठिन है। श्री क्षत्रिय युवक संघ की शाखा व शिविर में धीरे-धीरे अभ्यास के माध्यम से निरन्तरता और नियमितता जीवन व्यवहार में आती है। ❍

पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

सिद्धान्त पर चलना है तो हठपूर्वक मार्ग तो अपनाना है और व्यवहार व फल को देखना है तो सिद्धान्त की खाल खेंचनी चाहिये। मुझे पहले वाला मार्ग रुचिकर जचा और उसी का अनुसरण किया। **–पूज्य श्री तनसिंह जी**

''उक्त मार्ग के अनुसरण पर मुझे अब तक के जीवन में एक और भूल और वह भी ऐतिहासिक भूल नजर आई। वह थी आज तक जो करना है वह न कहकर जो कहना है वही कहा। इसकी जड़ में एक दोष है, जो वस्तु करनी है वही कहनी चाहिये और कुछ नहीं। हो सकता है कि ऐसी कही हुई बात को लोग पसन्द न करें और भ्रान्तियाँ पैदा हो जाए किन्तु यदि कहने योग्य ही कही जाए तो वह भयंकर भ्रान्तियों को जन्म देती है और अन्त में यदि हम 'करनी है' पर उतर आवें तो सम्बद्धता के दोष के कारण गुमराह करने वाले और बहकाने वाले बन जाते हैं।

''पदगत श्रद्धा और निष्ठा सिद्धान्तहीन और अन्ध–भक्ति को जन्म देती है। सखाभाव की पोषक न होकर पश्चिम के अधिनायकवाद की जननी है। यह बात साहस पूर्वक कही गई होती तो भी स्वीकार कर ली जाती किन्तु दुःख इस बात का है कि जमाने की चलती हुई सहज धारा के विरुद्ध किसी बात को कहने का हमारा चारित्रिक साहस लुप्त हो गया है। आज भी बहुत से लोग बहुत–सी बातें मानते हुए भी इस बात की शिकायत करते हैं कि अभी इनके लिए उपयुक्त समय नहीं आया। सच तो यह है कि समय आता नहीं– लाया जाता है। जिसके पास समय लाने का साहस नहीं, वे समय ला भी नहीं सकते और इसी कारण गलत दिशा–दर्शन में पड़कर भटक जाते हैं। एक दलील यह भी दी जाती है कि श्रद्धा हमेशा कर्म से उत्पन्न होती है अतः श्रद्धा और विश्वास के लिए शब्द की अपेक्षा क्रिया अधिक महत्त्व की है। इस दलील में सत्य है किन्तु वह एकांगी सत्य है। क्रिया के महत्त्व को शब्द से कम नहीं किया जा सकता, किन्तु शब्द के महत्त्व को भी क्रिया से कम नहीं किया जा सकता। शब्द शक्ति से जो प्रभाव हो सकता है– वह कर्म बिना निःसंदेह अधूरा है किन्तु कार्य शक्ति से भी जो प्रभाव पैदा किया जा सकता है वह भी शब्द के बिना अधूरा ही है। इसीलिए कथनी और करनी का सामञ्जस्य लाने की शिक्षा हमारे मनीषियों ने दी है किन्तु कभी इसका यह अभिप्राय नहीं, करनी और कथनी में भी सामञ्जस्य आना कम आवश्यक नहीं है। अत: आज भी मैं साहसपूर्वक उस मार्ग पर विचरण करने लगा हूँ जिस मार्ग में अत्यधिक खतरे हैं किन्तु मैं जानता हूँ मेरी ऐतिहासिक भूलों का इससे बढकर और कोई प्रायश्चित नहीं। मेरे पाठक! तुम आश्चर्य करोगे– वास्तविक सिद्धि मुझे इसी मार्ग से प्राप्त हो रही है और सच्चे साथी सामने आ रहे हैं, जो साथियों (सहयोगियों) के वेष धारण कर अपने भीतर किसी रहीस को छिपाये बैठे होते हैं उनकी पोल इसी मार्ग से इतनी जल्दी चोड़े आ जाती है कि खुद उन्हें ही आश्चर्य होता है और मुझे आश्चर्य इस बात का हो रहा है कि सागर के क्षीर से दूषित भूमि में आज संसार के सबसे अच्छे मीठे और कीमती फल लग रहे हैं। मैंने खतरे मोल लिये हैं और भयानक खतरे मोल लिये हैं किन्तु मुझे गर्व है कि इस समाज में जीवित रहने की अद्भुत क्षमता है और आज वे नवीन जीवन के लिए भी इतने ही कृत संकल्प और कृत प्रयत्न हैं जितने कि आज तक के किसी जीवन के लिए थे।

''साध्य और साधना के लिए मोटे रूप से साधक

विशिष्टता को तो मैंने स्वीकार कर लिया था किन्तु उस विशिष्टता में जन्म और रक्त की ही विशेषता को लिया था किन्तु यह मेरी भूल थी। निःसंदेह यह विशेषता तो साधक में होनी ही चाहिये किन्तु इससे अधिक विशेषता की भी आवश्यकता है। सभी साधना की गहराइयों के लिए उपयुक्त पात्रता का चयन होना ही चाहिये। चयन संभव नहीं हो तो जो कुछ मसाला हो उसी से निर्माण क्रिया जारी रखनी चाहिये। विशिष्ट ज्ञान और विशिष्ट साधना के लिए साधक में विशिष्ट क्षमताएँ होनी चाहिये। उनके अभाव में हर एक व्यक्ति को एक लकड़ी से हाँकना मनोवैज्ञानिक भूल होती है।

''दुर्भाग्य से हमारे किसी साधक के जीवन में साधना की एक विशिष्ट स्थिति आने पर हम साधक को स्वावलम्बी मान लेते हैं। फिर चाहे वह किसी रूप में और किन्हीं परिस्थितियों में आया हो, लेकिन हम उसकी पूर्णता को मानकर चलते हैं। यह भूल थी और इसका परिणाम यह हुआ कि साधना और प्रगति का मेल नहीं हुआ, वह एक निश्चित सीढ़ी पर पहुँच कर ठप्प हो गई। ऐसी जड़ अवस्था के साधक से किसी की सहायता और सहानुभूति की प्रेरणा की आकांक्षा करना आकाश कुसुम-सा ही है, लेकिन मेरी यह ऐतिहासिक भूल रही कि मैंने उनके भरोसे और सहायता की उम्मीद पर कितना ही श्रम और समय व्यर्थ खोया। वे हर सत्य और सिद्धान्त को अपने विगत जीवन की कसौटी पर कसते हैं। यह कोई खास बुरा नहीं है लेकिन बुरा यह है कि अपने शैशव और यौवन को आदर्श मान बैठते हैं और प्रगति के चरणों में बाधा देते हैं।

''मैंने ऐसे कई साधकों के दरवाजे अनिश्चितकाल तक अद्भुत सहनशीलता में खटखटाये। यह बुरा नहीं हुआ लेकिन बुरा यह हुआ कि उनके भरोसे बैठकर स्वयं निष्क्रिय बनने लग गया। मैंने यह सोचा कि उनके अन्दर सोया हुआ उनका अतीत मेरे दर्द से जाग सकता है लेकिन अफसोस इस बात का है, उन्होंने मेरे दर्द को समझा ही नहीं। वे उसे निरी भावुकता भरा नाटक समझते रहे और एक स्थान पर छत्रियों के नीचे बैठे हुए वे हँसे भी थे। अन्त में जाते-जाते उन्होंने यहाँ तक कह डाला कि इस समारोह का कोई लाभ नहीं मिला, यह प्रयास व्यर्थ गया। प्रयास निःसन्देह व्यर्थ गया। लेकिन वह इसलिए व्यर्थ गया, मेरी व्यथा व्यर्थ गयी। उसे अनुभव करने की क्षमता नष्ट हो चुकी थी। नष्ट होने का कारण था साधना एक जगह ठप्प हो गई, वह प्रगतिशील नहीं बनी। वे उसी ढाँचे और कसौटी पर नवीनता को कसना चाहते हैं जो असंभव है। प्रायश्चित स्वरूप मैंने यही निश्चय किया है कि किसी के सहारे और भरोसे बैठकर हम अपनी मौत को बुलाने का निमंत्रण दे रहे हैं इसलिए हमें अपनी भूलों का निदान अपनी ही साधना से करना है, अतः अब मैं नवीन शक्ति से फिर जुटा हूँ, बिना इसकी परवाह किये कि चाँदी से सोना कीमती है।

''सत्य यह है कि सोना कीमती है किन्तु यह भी सत्य है कि उसे उपार्जित करना होगा। जो खो गया है या हाथ से निकल गया है उसके लिए प्रयत्न करना ठीक है किन्तु उसका अभिप्राय यह कभी नहीं कि नवीन खानों से सोना निकालने की सम्भावनाएँ ही समाप्त हो गई हैं। अतः अब मेरी साधना के प्रयत्न द्विमुखी हैं।

''इतना सब कुछ इसलिए लिख डाला कि यह सब मेरी अनुभूतियों और भूलों का बड़ा लेखा-जोखा है। उसे देखे बिना, उस पर किसी प्रकार का चिन्तन किये बिना मेरा आगे का मार्ग अन्धकारपूर्ण होगा। मैं जानता हूँ इस लेख में शब्दों का जो जंजाल है उसमें तुम अपने आपको खोजने की चेष्टा करोगे और यदि कहीं तुम्हें अपना स्वरूप दिखाई दे तो उसे भूलना नहीं है। यही मेरे इस प्रकरण का उद्देश्य है।

''क्या इतना लिखने के बाद मैंने अपनी सभी भूलों का सिंहावलोकन कर लिया है? नहीं। भूलें इससे भी अधिक हैं। बल्कि सत्य यह है कि भूलों का जंगल इतना गहन है कि उससे दुबारा गुजरने का साहस तक भी नहीं होता। सत्य यह है कि समय ही किसी परिणाम को भूल सिद्ध करता है अन्यथा भूल करते समय तो हर एक को वह सही मार्ग ही

दिखाई देता है और इसलिए मैंने भी इन भूलों को करते समय कभी यह महसूस नहीं किया कि मैं भूल कर रहा हूँ। यह सब तो आज अनुभव कर रहा हूँ और हो सकता है ऐसा भी समय आ जावे जब यह भूल मेरे गुणों की पराकाष्ठा दिखाई देने लगे किन्तु जब तक ऐसा समय नहीं आयेगा तब तक मुझे अपने कार्यकलापों में भूलों को छाँटना होगा और मैं अनुभव करता हूँ कि तुम्हें भी यही प्रक्रिया अपनानी चाहिये। साधक जीवन की यह आवश्यक शर्त है।

''हर दोष को जड़मूल से नष्ट करना चाहिये। समझौतावादी नीति स्वार्थपूरक और सिद्धान्तहीन नीति है जिसके मूल में चारित्रिक दुर्बलता है। इन्हीं विचारों से प्रभावित होकर दोषों को दण्ड की कसौटी पर खड़ा किया। दण्ड का नाम लेते ही हड़बड़ मच गई। कुछ जानते हुए और कुछ बिना जाने ही घबड़ा उठे। आज उसका लाभ हुआ या नहीं, यह बात कोई नहीं सोचता किन्तु इसे भी भूल ही बताया जाता है। मैं परेशान हो उठा। किसी को बुरा बताया यह भी भूल हो गई। दूसरे के दोष से अपने आपको दण्डित किया तब भी भूल थी और दोषी को अपने दोष के लिए उसको खुद को दण्डित किया वह भी भूल हो गई। अभिप्राय यह कि हर कदम भूल ही भूल था और हर भूल एक ऐतिहासिक भूल थी।''

पूज्य श्री तनसिंह जी ने अपने अनुयायिओं से कहा–

''इस बात से भी तुम इनकार नहीं कर सकते कि जब इस जिन्दगी की खेह रह जायगी, सही रूप में तुम उसी वक्त अन्दाज लगा सकोगे कि इन राहों पर दौड़ने वाले घोड़े कितने बेतहाशा दौड़े थे। कोलाहल-पूर्ण संसार में एक सामान्य व्यक्ति का जीवन किस महत्त्व का है, किन्तु यदि कोई इस समाज को पुनर्जागृत करने के स्वप्न देखेगा तो निश्चित उसे मेरे जैसा ही सामान्य बनना पड़ेगा और उसे मेरे ये अनुभव काम के लगेंगे और इसीलिए मैं भविष्य के उस भागीरथ के लिए यह जीवनी लिख रहा हूँ जो इस संसार में स्वर्ग की गंगा को आने के लिए मजबूर करेगा। किन्तु भविष्य के उस महापुरुष को सचेत अवश्य करूँगा कि मेरे जीवन की प्रत्येक बात अनुकरणीय नहीं है क्योंकि मैं खुद जानता हूँ कि मैंने अपने जीवन में कई ऐतिहासिक भूलें की हैं और आज उन भूलों को यहाँ लिख रहा हूँ ताकि आने वाला पथिक यदि सम्भव हो तो उनसे बचने की चेष्टा करे। मैं जानता हूँ कि जो महापुरुष बनने जा रहा है वह मेरे जैसे का जीवन कभी अध्ययन नहीं करेगा किन्तु इतना मुझे विश्वास है कि मेरे गुण यदि कोई हैं तो उनका अनुकरण उसके लिए आवश्यक बिलकुल नहीं पर हाँ मेरी भूलों का उसे भी ध्यान रखना होगा, अन्यथा वह महापुरुष होकर भी मेरे जैसे साधारण व्यक्ति की भूल करने वाला हो जाएगा।''

(क्रमशः)

स्वभाव सुधरा हो तो मनुष्य कहीं जाय, सुख पायेगा, स्वभाव बिगड़ा हो तो मनुष्य कहीं जाय, दुख पायेगा।

'हम सत्य बोलेंगे'–इसकी अपेक्षा 'हम झूंठ नहीं बोलेंगे' यह नियम लेना बढिया है। कारण कि 'हम सत्य बोलेंगे'–ऐसे नियम लेने से व्यवहार में बहुत कठिनाई होगी।

धर्म के कंटकाकीर्ण मग पर.....

– रेंवतसिंह पाटोदा

पूज्य तनसिंह जी ने परमेश्वर से प्रार्थना करते हुए लिखा, **''धर्म के कंटकाकीर्ण मग पर, धीरज से मैं कदम बढ़ाऊं।''** धर्म का मार्ग सत्य का मार्ग होता है, प्रकाश का मार्ग होता है, न्याय का मार्ग होता है, परमेश्वर की चाह को कार्यरूप देने का मार्ग होता है, सुख की ओर प्रवाहमान करके अंततः परम सुख को उपलब्ध कराने का मार्ग होता है।

ऐसे में हमारे जैसे सामान्य मनुष्यों के समक्ष प्रश्न खड़ा हो सकता है कि यह धर्म का मार्ग कंटकाकीर्ण क्यों होता है? जिस मार्ग से सुख उपलब्ध होता है वह कांटों भरा क्यों? कांटों में तो स्वाभाविक रूप से सामान्यतया सुख नहीं बल्कि दुःख मिलता है। हमारा प्रश्न स्वाभाविक ही है लेकिन इस मार्ग की भी यह स्वाभाविक ही विशेषता है कि यह कांटों भरा ही होता है। इतिहास में जिन जिन लोगों ने इस मार्ग का अनुसरण किया है उनकी पूरी जीवन गाथा इन कांटों से संघर्ष की ही कहानी है। हमारे पूर्वजों में प्रहलाद से लेकर तनसिंह जी तक जिन जिन लोगों ने इस धर्म पथ का अवलंबन किया उन सबके जीवन को देखेंगे तो इसी ध्रुव सत्य का दर्शन करेंगे कि धर्म का पथ कंटकाकीर्ण ही होता है। भगवान ने भी इस धरा पर जब जब धर्म की स्थापना के लिए मानव तन धारण कर इस पथ को प्रशस्त किया तब कांटों से संघर्ष को ही अपनी नियति मानकर अपने अवतरण के लक्ष्य को स्थापित किया है।

पूज्य तनसिंह जी ने भी अपने पुरुषार्थ के बल पर ऐसा ही धर्मपथ प्रशस्त किया है जो उनके आशीर्वाद और परमेश्वर की कृपा से हमारे जैसे सामान्य कोटि के लोगों के लिए सुलभ हो पाया है और क्योंकि यह धर्म का मार्ग है इसलिए कंटकाकीर्ण भी है, इसीलिए पूज्य तनसिंह जी ने हमें परमेश्वर से यह प्रार्थना करना सिखाया कि **धर्म के कंटकाकीर्ण मग पर धीरज से मैं कदम बढ़ाऊं।** लेकिन हमारे लिए विचारणीय यह है कि यह मार्ग हमारे लिए कंटकाकीर्ण कैसे है, कौन कौन से कांटे हैं इस मार्ग में? क्या सर्दी, गर्मी, वर्षा आदि प्रतिकूल भौगोलिक परिस्थितियां ही कांटे हैं, क्या हमारे परिवार जनों का असहयोग ही वे कांटे हैं, क्या समाज के लोगों का असहयोग ही नहीं बल्कि विरोध ही वे कांटे हैं, क्या आराम का अभाव, आर्थिक तंगी, साधनों का अभाव ही वे कांटे हैं या इससे इतर भी और कोई कांटे भी हैं? निश्चित रूप से उपरोक्त सब तो कांटे हैं ही लेकिन इन सबको पार करने या एक बार पार करने के बाद पुनः आने पर पार करने की क्षमता आने के बावजूद भी बड़े बड़े कांटे शेष रह जाते हैं जिनसे संघर्ष की प्रेरणा हमारे पूर्वजों के पुरुषार्थ की कहानी हमें देती है।

हम अपने आपका विश्लेषण करें तो पायेंगे कि इन सबसे पार करने की क्षमता होने और संकल्प जागृत होने के बावजूद भी निरंतर चलते जाना कितना मुश्किल है। हमारे में से जो रोजगार के अभाव के कारण चल पाने में असमर्थता जताते थे क्या वे रोजगार मिलने के बाद तो चल रहे हैं? जो आर्थिक तंगी को कारण बताया करते थे क्या वे आर्थिक रूप से संपन्न होने के बाद चल पा रहे हैं? जो परिवार के असहयोग के कारण असमर्थता जताते थे वे क्या आज परिवार के सर्वेसर्वा बनने के बाद भी चल पा रहे हैं? साधनों के अभाव को कारण बताने वाले क्या साधनों की विपुलता के बाद तो इस मार्ग पर निर्बाध गति से गतिमान हैं? इन प्रश्नों का उत्तर ढूंढेंगे तो हम पायेंगे कि ऐसा नहीं हो पा रहा है, इसका अर्थ है कि उपरोक्त कांटों से भी बड़े कांटे हमारे स्वयं में विद्यमान हैं जो हमारे इस मार्ग को कंटकाकीर्ण करते हैं। हमारा अहंकार अलग अलग रूपों में बार बार हमारे सामने कांटा बनकर खड़ा हो जाता है। हमारे स्वार्थ के नित

नये रूप बनते और बिगड़ते रहते हैं तथा हर बार हमारे समक्ष कांटे बनकर खड़े हो जाते हैं। कभी हमारी महत्त्वाकांक्षा आड़े आ जाती है तो कभी हमारे सम्मान की भूख जाग जाती है। कभी हमारी उपेक्षा की शिकायत कांटा बनती है तो कभी हमारी अपेक्षाएं कांटे बन जाती हैं। कभी हमारा संकल्प क्षीण पड़ जाता है तो कभी हमारे को टोका जाना हमारे लिए कांटा बन जाता है। कभी साथियों के प्रति हमारी ईर्ष्या आड़े आती है तो साथियों द्वारा हमारे से की जाने वाली ईर्ष्या आड़े आ जाती है। इस प्रकार नित नये प्रकार के कांटे हमारे इस मार्ग में आते रहते हैं, एक कांटे को पार कर कुछ सुकून पाते हैं कि इसके आगे उससे भी भारी कांटा हमारी प्रतीक्षा कर रहा होता है। इस प्रकार हमारा यह जीवन भी कांटों से संघर्ष की कहानी बनकर रह जाता है। ऐसे में हमारे जैसा सामान्य मनुष्य निराश भी होता है, पलायन को भी मन करता है, ईश्वर से शिकायत भी करता है और कभी कभी ठहर भी जाता है।

पूज्य तनसिंह जी इस मार्ग के इस व्यवहारिक पक्ष से भलीभांति परिचित थे इसलिए उन्होंने इसका उपाय भी बताया, ''**धीरज से मैं कदम बढ़ाऊं।**'' जिस प्रकार कांटे इस मार्ग की वास्तविकता है वैसे ही इस मार्ग पर बने रहने का धैर्य भी इस मार्ग की वास्तविक आवश्यकता है। हर कांटा हमारे धैर्य की परीक्षा होता है। सबको कल्याण के मार्ग पर अग्रसर करने वाला परमेश्वर कभी भी यह नहीं चाहता कि धर्म के मार्ग पर आने वाला साधक इस मार्ग से विरत हो जाये, इसलिए उसके द्वारा भेजे जाने वाले कांटे हमें रोकने के लिए नहीं बल्कि उन कांटों को पार करने की क्षमता अर्जित करवाने के लिए होते हैं। धर्म के मार्ग पर चलने वाले साधक के शरीर, मन, प्राण, बुद्धि, हृदय आदि किसी भी सत्ता का अपरिमार्जित रह जाना उसके भविष्य की यात्रा के लिए अवरोधक बन सकता है। धर्म के पहरुए के किसी भी पक्ष का अपरिमार्जित रह जाना धर्म की स्थापना की सुनिश्चितता पर प्रश्नचिह्न लगा सकता है इसलिए कांटे हमें परिमार्जित करने के लिए होते हैं और वह परिमार्जन हमारे भीतर और बाहर पूर्ण रूप से घटित हो सके, हम स्वयं को उसका कार्यक्षेत्र बना सकें इसके लिए धैर्य की नितांत आवश्यकता होती है। इसीलिए धीरज से कदम बढ़ाने की क्षमता देने की प्रार्थना की गई है। हमें इस कंटकाकीर्ण मार्ग पर धीरज रखना होगा इस मार्ग पर बने रहने का, हमें धीरज रखना होगा कांटों से संघर्ष के परिणाम के प्रकट होने का, हमें धीरज रखना होगा इस संघर्ष के दौरान आने वाले पलायनवादी विचारों से अप्रभावित रहने का, हमें धीरज रखना होगा हमारे ही भीतर के अपरिमार्जित पक्ष के प्रति सहानुभूति न रखने का और यदि हम इस धीरज को रखते हुए कदम बढ़ाते रहेंगे तो निश्चित रूप से हमारा स्वरूप हर कांटे से संघर्ष के बाद पूर्व की अपेक्षा अधिक निखरा हुआ होगा। इसलिए आयें हम परमेश्वर से यही प्रार्थना करें कि पूज्य तनसिंह के आशीर्वाद और परमेश्वर की कृपा से उपलब्ध हुए धर्म के इस कंटकाकीर्ण मार्ग पर हमें धीरज से कदम बढ़ाने की क्षमता वे देते रहें। पूज्य तनसिंह जी का आशीर्वाद और परमेश्वर की कृपा हम सब पर बनी रहे।

मैं उन गुरु के चरण कमलों की वंदना करता हूँ जो कृपा के सिन्धु, मानव देह में भगवान हैं और जिनके वचन माया–मोह के गहन अंधकार को नष्ट करने के लिए सूर्य–किरणों के समूह हैं।

– तुलसीदास

खंडहर बता रहे वैभव की गाथा

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

घोड़ां घर ढालां पटळ, भालां थम्म बणाय।
जै ठाकुर भोगै जमीं, अवर किसो अपणाय।।

वीररस के इस दोहे का भावार्थ है कि घोड़े की पीठ को घर, ढाल को छत और भाले को स्तम्भ (थम्म) बना कर जो राजा (स्वामी) बनता है उसकी भूमि का कोई दूसरा मालिक नहीं हो सकता अर्थात् संघर्षशील व्यक्ति अपने संसाधनों का उपयोग करते हुये जीवनयापन करे तो उसके अधिकारों को दूसरा व्यक्ति छीन नहीं सकता। शोधकर्ताओं ने व्याख्या करते हुये स्पष्ट किया है कि इतिहास का अर्थ है 'ऐसा निश्चित रूप से हुआ था' इतिहास की घटनाओं को प्रमाणित करने के लिए पुस्तकों में लिखित साहित्य के अतिरिक्त शिलालेखों, दानपत्रों एवं प्रशस्ति-पत्रों का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। ऐसे ही समस्त तथ्यों के आधार पर हम गोगाजी चौहान की रानी राठौड़ राजकुमारी केलमदे के सम्बन्ध में सही जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करेंगे।

'राष्ट्रकूटों' का प्राचीन इतिहास इसी प्रकार के तथ्यों पर आधारित है। उत्तर भारत से दक्षिण भारत तथा दक्षिण भारत से उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रों पर शासन करने वाले राष्ट्रकूट (राठौड़) शासकों का इतिहास विलक्षण योद्धाओं एवं दानदाताओं की गाथा है। 'बीकानेर राज्य का इतिहास' में लिखा है कि 'प्राकृत शब्दों की उत्पत्ति के नियमानुसार 'राष्ट्रकूट' शब्द का प्राकृत रूप 'रट्ठऊड़' होता है, जिससे 'राठऊड़' या राठोड़ शब्द बनता है। 'राष्ट्रकूट' के स्थान पर कहीं-कहीं 'राष्ट्रवर्य' शब्द भी मिलता है, जिससे 'राठवड़' शब्द बनता है। 'राष्ट्रकूट' और 'राष्ट्रवर्य' दोनों शब्दों का अर्थ एक ही है, क्योंकि 'राष्ट्रकूट' का अर्थ 'राष्ट्र' जाति या वंश का शिरोमणि है और 'राष्ट्रवर्य' का अर्थ 'राष्ट्र' जाति अथवा वंश में श्रेष्ठ है।' अनेक स्थानों पर राठौड़ों के लिए राष्ट्रकूट शब्द का प्रयोग हुआ है। चूरू जिले के गाँव गोपालपुरा में राव बीदा के पुत्र उदयकरण के वि.सं. 1565 के स्मारक लेख में 'राष्ट्रकूट वंशे' लिखा हुआ है। 'ख्यात देशदर्पण' में लिखित वंशावली के क्र.सं. 64 पर भगवान राजा रामचन्द्र एवं क्र.सं. 65 पर कुश का नाम लिखा है। इससे प्रमाणित होता है कि राष्ट्रकूट (राठौड़) कुश के वंशज हैं। कुछ लेखकों ने लव का वंशज भी बताया है जो सही नहीं है। 'राजपूत वंशावली' में ठा. ईश्वर सिंह मडाढ ने लिखा है, 'भगवान राम के पुत्र कुश के किसी वंशज ने दक्षिण में जाकर राज्य स्थापित किया था। वहाँ उनकी राजधानी मान्यखेट थी। वहाँ से इनकी एक शाखा मध्य भारत में आयी जिससे इनके राज्य को महाराष्ट्र कहा जाने लगा।' 'ख्यात देश दर्पण' में वर्णित वंशावली के अनुसार इस वंश में क्र.सं. 125 पर राजा रठवर हुये। 'राठेश्वरी देवी रावरदान सूं हुओ पुत्र, तैं सूं रठवर कहाया।' क्र.सं. 131 पर राजा कमधज का नाम लिखा है। 'इण सूं कमधज कहाया' दूसरे मतानुसार बिना सिर के धड़ को 'कबंध' कहा जाता है, राठौड़ योद्धा बिना सिर के लड़ने में भी सक्षम थे, इसलिए इन्हें 'कमधज' कहा जाता है। राष्ट्रकूट पहले भारत के उत्तर-पश्चिम प्रदेश में ही रहते थे और बाद में यहाँ से एक शाखा ने दक्षिण की तरफ नये राज्य की स्थापना हेतु प्रस्थान किया। 'राष्ट्रकूटों का इतिहास' में लिखा है कि 'इन प्रमाणों पर विचार करने से प्रकट होता है कि विक्रम की छठी शताब्दी में वहाँ पर (दक्षिण में) राष्ट्रकूटों का राज्य था।' 'बीकानेर राज्य का इतिहास' में लिखा है कि दक्षिण के येवूर गाँव (कलाडगी जिला) के सोलंकियों की वंशावली वाले (सोमेश्वर के मन्दिर में लगे हुए) शिलालेख से पाया जाता है कि वि.सं. 550 के लगभग राष्ट्रकूट राजा कृष्ण के पुत्र इन्द्र को

जिसकी सेना में 800 हाथी थे, सोलंकी राजा जयसिंह ने जीता और वहाँ 'सोलंकी राज्य की स्थापना की।' यह शिलालेख प्रमाणित करता है कि इस ऐतिहासिक घटना से पूर्व दक्षिण में भी राष्ट्रकूटों का सुदृढ़ राज्य था तथा इसके पश्चात् भी दक्षिण क्षेत्र में इनका प्रभाव क्षीण नहीं हुआ था। राजधानी एवं सामरिक महत्त्व के कुछ स्थानों को छोड़कर अन्य क्षेत्रों पर राष्ट्रकूटों का प्रभाव यथावत रहा।

शिलालेखों एवं दानपत्रों के आधार पर इतिहासकारों ने मान्यखेट (दक्षिण के मालखेड़ राज्य के अन्तर्गत, रेउ ने इसकी स्थिति शोलापुर से 90 मील दक्षिण-पूर्व दी है) के राष्ट्रकूटों का तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। इतिहासकार विश्वेश्वरनाथ रेउ की पुस्तक 'राष्ट्रकूटों का इतिहास' में (वि.सं. 650 के पूर्व से लेकर वि.सं. 1030) तक 19 राष्ट्रकूट राजाओं का विवरण दिया गया है लेकिन हम अपने शोधपूर्ण आलेख की आवश्यकता के अनुसार मान्यखेट के 10 राष्ट्रकूट (राठौड़) शासकों के सम्बन्ध में विभिन्न लेखकों द्वारा तैयार ऐतिहासिक सामग्री एवं अन्य स्रोतों के आधार पर अध्ययन करेंगे -

1. दन्तिवर्मा (दन्तिदुर्ग) प्रथम- यह राजा पूर्व वर्णित जयसिंह सोलंकी द्वारा परास्त राष्ट्रकूट राजा इन्द्र का वंशज था। मान्यखेट राष्ट्रकूट राजाओं की प्रशस्तियों में इसका नाम सर्वप्रथम लिखा हुआ है। सोलंकियों के अधिकार क्षेत्र से बाहर राष्ट्रकूट राज्य का यह संरक्षक एवं स्वाधीन शासक था।

2. इन्द्रराज प्रथम- इस राष्ट्रकूट राजा एवं इसके पिता दन्तिवर्मा का नाम एलोरा की गुफाओं में दशावतार मन्दिर के लेख में भी लिखा हुआ है। दशावतार लेख के अनुसार यह अनेक यज्ञों को करने वाला वीर शासक था।

3. गोविन्दराज प्रथम- यह इन्द्रराज का पुत्र और उत्तराधिकारी था। इसने अपने शासनकाल (वि.सं.691) में पूर्वजों के हाथ से गये राज्य के शेष भाग को भी प्राप्त करने का प्रयास किया। कुछ इतिहासकारों ने गोविन्दराज को वीर नारायण नाम से भी लिखा है।

4. कर्कराज प्रथम- गोविन्दराज प्रथम का पुत्र कर्कराज उसका उत्तराधिकारी बना। वैदिक धर्म में आस्था रखने वाला यह राष्ट्रकूट राजा विद्वानों का आश्रयदाता एवं दानी था।

5. इन्द्रराज द्वितीय- कर्कराज के इस पुत्र के समय चालुक्यों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध यथावत रहे। इसकी सेना सुदृढ थी जिसमें घोड़े एवं हाथियों की संख्या अत्यधिक थी।

6. दन्तिवर्मा (दन्तिदुर्ग) द्वितीय- यह अपने पिता इन्द्रराज द्वितीय के बाद गद्दी पर बैठा। इसने वि.सं. 804 से 810 के मध्य सोलंकी कीर्तिवर्मा (द्वितीय) के समय विस्तृत भू-भाग पर अधिकार कर दक्षिणी क्षेत्र में राष्ट्रकूट राज्य को सुदृढता प्रदान की। दक्षिण के इस प्रतापी राजा ने कलिंग, कोसल, मालव, टंक एवं नर्बदा के पश्चिम क्षेत्र लाट तथा नागवंशियों पर विजय प्राप्त कर राज्य का विस्तार किया। 'बीकानेर राज्य का इतिहास' में भी इसका उल्लेख किया गया है। दानपत्रों से प्रमाणित होता है कि इसका राज्य गुजरात और मालवे की उत्तरी सीमा से लेकर दक्षिण में रामेश्वरम् तक विस्तृत था।

7. कृष्णराज प्रथम- दन्तिदुर्ग के बाद उसका चाचा कृष्णराज प्रथम शासक बना जो इन्द्रराज द्वितीय का छोटा भाई था। शिलालेखों, ताम्रपत्रों एवं दानपत्रों के अतिरिक्त इसके राज्यकाल में निर्मित 1800 के लगभग चांदी के सिक्के प्राप्त हुये हैं जो राज्य की आर्थिक स्थिति एवं व्यापार की जानकारी प्रदान करते हैं।

8. गोविन्दराज द्वितीय- कृष्णराज का बड़ा पुत्र गोविन्दराज उसका उत्तराधिकारी हुआ। दानपत्रों से इसके राज्य के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी मिलती है। इसने भोग-विलास में फंसकर राज्य का कार्य अपने छोटे भाई को सौंप दिया, जिससे इसका प्रभुत्व शिथिल हो गया तथा कालान्तर में इसके भाई युवराज (निरुपम) ने राज्य पर अधिकार कर लिया।

(शेष पृष्ठ 18 पर)

'तन' के मन की व्यथा

– स्वरूपसिंह बांवरला

तुम सब जानती व्यथा हमारी किसको पुकारें माँ!

मैंने अपनी व्यथा को माँ भगवती के चरणों में समर्पित कर नित्य उनसे बस यही कहा है कि इस कौम को उसके स्वधर्म का पुन: बोध करने और कराने की क्षमता प्रदान करो माँ! जिस कौम के लोग अपने पथ को भूलकर अपने स्वाभाविक मूलधर्म के पथ पर चलना छोड़ चुके, उन्हें पुनः अपने स्वधर्म का बोध-दर्शन करा सकूं इतना आशीर्वाद दो माँ!

हँसते-खेलते, माताजी की गोद में लौटते-पोटते जीवन की मात्र चार वर्ष की उम्र में ही काली घटाओं के अंधकार का श्राप लग चुका था। बाड़मेर के आसपास जितना यश और कीर्ति का ध्वज ऊँचे गगन में लहरा रहा था, वो अब इस अंधकार में छिप गया था। ठाकुर बलवंत सिंह जी, मेरे पिताजी का निधन हो चुका था और अब उस अबोध बालक पर उस जागीरी, उस कुल की जिम्मेदारी की पाग माथे पर बंध चुकी थी और मैं कुंवर तणेराज से ठाकुर तणेराजसिंह कहलाने लगा, जिसने खुद अभी ढंग से चलना, बोलना न सीखा था, उसे ठकुराई चलानी कैसे आएगी?

माताजी को हमेशा रंग-बिरंगी पोशाकों और चूड़े-मूठिए में देखा, जिनके चेहरे पर सदा ही एक सुन्दर मुस्कान सजी रहती थी। अब माताजी काले कपड़ों में, बैरंग-सा चेहरा और वियोग को दर्शाती वो मुरझाई आँखें। फिर भी माँ ने अपने हृदय को कठोर बनाकर अपने पुत्र प्रेम में चेहरे पर कोमलता रमाये मेरा लालन-पालन किया और अपने सत से मेरे सत को भी जागृत रखा। छोटी आयु में ही जीवन में इतने उलट-फेर देखे कि मुझ अबोध को बोधता की ओर बढ़ने में ज्यादा-ज्यादा समय नहीं लगा।

मैं अपनी शिक्षा बाड़मेर में अकेला रहकर कर रहा था। खुद ही अपने छोटे हाथों से जैसी भी रोटियाँ बनती, पकाता, खाता और माताजी के वचनों को याद कर अपने पथ पर आगे बढ़ रहा था। मुझे मेरी माताजी की व्यथा का हमेशा स्मरण रहता। उन्होंने सब के ताने सुनकर भी मुझे कभी महसूस नहीं होने दिया कि उन पर क्या बीत रही है। हफ्ते-दो हफ्ते में कभी आते तो घट्टी में आटा पीस कर रख देते थे। फिर अपने हाथ से रोटी बना उसका अच्छा चूरमा कर अपने हाथों से खिलाते भी थे। कभी ऐसा ममत्व देखने को मिलता तो कभी गलती करने पर पिता जैसा कठोर भाव भी। लेकिन हाँ, मैं अभागा तो हूँ, जिसके अपने बचपन में ही पिता रूपी छत सिर से हट गई और उसके बाद शिक्षा के लिए माँ की ममता से भी दूर होना पड़ा। शायद इसलिए कि समाज रूपी माँ अपने दोनों हाथ पसारे खड़ी थी मुझे गले लगाने को।

उन दिनों मैंने माताजी से एक मूल बीज मंत्र सीखा था जो मुझे वे हर बार कहा करते थे- 'बेटा! चाहे कुछ भी हो जावे पण चालणो सिर्फ सत मारग पर। सत रो मारग खांडे री धार ज्यूं है, सत माथै चालणो कठिन है पर सत कदी नी छोडणो।' 'सत छोड्यां पत जाय' यह मंत्र जीवन भर के लिए मेरे मन, विचार, आचरण, सब में बस चुका था।

मैं अब बाड़मेर से चौपासनी स्कूल जोधपुर में आ गया था। जहाँ मैने अपने समाज को और करीब से देखा। ज्यों-ज्यों मैं और जानता गया, त्यों-त्यों मेरे हृदय में एक पीड़ा उठने लगी, जो और अधिक से और अधिक बढ़ती रही।

मैंने जाना कि 'राजपूती' 'रजपूती' की हम सब

बात करते हैं, वह तो केवल बात तक ही सीमित है, उसे आचरण में, जीवन में किसने उतारा? वर्तमान में दशा ऐसी हो गई है कि जैसे अपाहिज हो गई हो। सिर्फ तेज और शौर्य की बातें करते हैं, वैसा जीवन जी कौन रहे हैं? जिस समाज में ऐसे महापुरुष हुए जो मात्र एक पक्षी को जीवन दान देने अपना जीवन समर्पित कर दे, एक गौ को बचाने के लिए अपने प्राण समर्पित कर दे, ऐसे लाखों उदाहरण हैं जिनके बलिदान की अधिकांश को तो जानकारी ही नहीं है। और जिन्हें इसका बोध है वे तो बस बुद्धिजीवी बने घूम रहे हैं। इतिहास और महापुरुषों के बलिदानों की छांव में बैठकर स्वधर्म की पालना कैसे की जा सकती है? बिना कुछ किए तो क्या कुछ भी होना सम्भव है? यह तो बिल्कुल वैसा ही है जैसे कि बंजर भूमि पर फेंके बीज से खेती की चेष्टा करना। तो क्या किया जाए, पीड़ा यही पूछ रही थी।

यह पीड़ा इतनी बढ़ी कि रातों की नींद आँखों में बसने का नाम ही न ले। एक तरफ चन्द्रमा अपनी चाँदनी बिखेर रहा था तो इस तरफ छात्रावास के बरामदे में यह वेदना मेरे सीने को चीर रही थी। क्या किया जाए? यह संशयात्मक प्रश्न चलता रहा और बढता रहा। मन, मस्तिष्क सब उस पीड़ा से ग्रसित हो चुका था। समाज में अमृत की रक्षा और विष का विनाश करने वाले योद्धा हैं तो जरूर लेकिन उनके हृदय में उस ज्योति को जागृत करने की आवश्यकता है। वह स्वतः तो जागृत नहीं होगी, उसके लिए किसी को शिक्षक बन उस दीपक को रोशन करने की आवश्यकता है, इन्हीं सब चिन्ताओं में दिन बीतते गये। मैं अपनी शिक्षा में भी निरन्तर अभ्यास व प्रयासरत आगे बढ़ रहा था। माताजी की प्रेरणा व विद्यामाता के आशीर्वाद से मैंने चौपासनी से दसवीं कक्षा पास की व पूरी स्कूल में साल का सर्वश्रेष्ठ छात्र रहा।

आगे की पढ़ाई करने के लिए मुझे पिलानी जाना पड़ा। वहाँ राजपूत छात्रावास था, मैंने भी यहीं रहकर अपनी पढाई जारी रखी। लेकिन जीवन में अभावों ने अब भी पीछा नहीं छोड़ा। निर्धनता मेरे पथ पर संगी बनकर चल रही थी। तीन रुपए की छात्रवृत्ति मिलती वो मेरे ही एक सहपाठी की सहायता में खर्च हो जाती थी। रसोइये को क्या दूँ? तो मैं अपना भोजन भी स्वयं ही पकाता, फिर भी स्वयं मेरा, मेरे सहपाठी मित्र का खर्च नहीं चलता था। माताजी से मिली सीख- कि कार्य करने में कैसा संकोच, इस सांचे में मेरी संरचना हुई अत: मैंने कभी कोई कार्य करने में संकोच नहीं रखा।

भोर जल्दी उठकर छात्रावास में रह रहे सभी के कमरों तक दाँतुन उपलब्ध करवाना, पास ही के दर्जी की दुकान पर कपड़े सीलने जैसे कार्य और सब्जी उगाकर इसे बेचने तक का कार्य मैं अपनी पढ़ाई के साथ-साथ बड़े चाव से कर अपना व मित्र का खर्चा वहन कर लेता।

उन दिनों आजादी आन्दोलन भी जोरों पर चल रहा था। देशप्रेम की भावना ने मुझे और मेरे साथियों को भी आन्दोलन का हिस्सा बना दिया। आन्दोलनों में सम्मिलित होने की वजह से कॉलेज प्रशासन ने मुझे बाहर निकाल दिया। मैंने कॉलेज के बाहर बैठकर अपने साथियों के साथ इसका विरोध किया और हम धरने पर बैठ गए। प्रशासन की लाख कोशीश पर भी हम सब डटे रहे। आखिर में जब सेठजी धरना स्थल पर आए तो उन्होंने मुझसे कहा-'यह किस मार्ग पर चल रहे हो? तुम्हारे बाप-दादा ने तो यह मार्ग कभी नहीं चुना।' यह बात सेठजी की मेरे हृदय को झकझोर गई। वे भी मेरे बाप-दादा के तेज से परिचित हैं, सेठजी की इस बात ने मेरी समाज की पीड़ा की अग्नि में आहुति डाली। अब मेरा चितचिंतन, मनन, एकान्त और गहराई से अपने समाज सुधार के मंथन में लग गया। मेरे मन की व्यथा और अधिक प्रखर होती जा रही थी।

ऐसा नहीं था कि समाज में कोई भी इस कार्य में न लगा हो। अपने-अपने स्तर पर कुछ लोग कार्य

तो कर रहे थे परन्तु वे कुछ समय तक तो दिखाई पड़ते हैं, फिर समाज को अपने हाल पर छोड़कर वापिस अपने जीवन कार्यों में मस्त हो जाते हैं। कुछ लोगों को देखा जो कहते हैं, मैं हमेशा तैयार हूँ पर समाज ही पीछे नहीं चलता, यह कहकर समाज को ही दोषी बना देते हैं। कुछ कहते हैं कि इस समाज में अब कुछ नहीं हो सकता, यह समाज अब चेतना विहीन समाज है।

किसी भी कार्य को करने से पहले उसकी दिशा निर्धारित करनी पड़ती है। बिना दिशा के किए गये कार्य कुछ ही समय में धराशायी हो जाते हैं। समाज सुधार सब चाहते हैं पर स्वयं में बदलाव कोई नहीं करना चाहता, निज में बदलाव नहीं ला सकते तो समाज को बदलने की इच्छा मात्र इच्छा ही बनी रहती है। बहुत लोग तो यश, कीर्ति और नाम के खातिर समज कल्याण के नाम से कार्य करते हैं परन्तु वांछित फल न मिलने पर बहुत जल्द निराश होकर बैठ जाते हैं। हम सब केवल सुनाना चाहते हैं पर कभी किसी की बात सुनने को तैयार नहीं। हमें लेना सब कुछ है पर देना कुछ नहीं। अपनी बात को मनवाना सबसे चाहते हैं पर दूसरे की बात मानने को तैयार नहीं। निज स्वार्थ व अहंकार से भरे समाज के लोग दो-चार दिन भी एक मत और एक मन नहीं हो पाते हैं। अग्रणी बने लोग यह भी नहीं समझते कि हम जिस कुल में जन्मे हैं, उस समाज का त्याग, तपस्या, शौर्य और पराक्रम से अपनी संतानों को परिचित कराऊँ। नेता बनने, नेतृत्व करने को सब आतुर हैं परन्तु अनुचरत्व को कोई स्वीकार नहीं करना चाहते।

आम राजपूत की व्यथा कोई भी धनी राजपूत सुनने को तैयार नहीं। जो समाज हित के लिए बड़ी-बड़ी सभाएं बनी हैं, वहाँ भी आम राजपूत को कोई जगह ही नहीं है। पीछे छूटे समाज बन्धुओं को ऊपर उठाना ही समाज को उठाना है, यह कोई समझने को तैयार नहीं है। पतन की ओर ढलते समाज के नेता समाज कल्याण हेतु नीति बनाने की जगह मदिरा के प्यालों में अपना गौरव ढूंढते हैं। इस समाज ने ज्यों-ज्यों ये प्याले भरे हैं, त्यों-त्यों क्षत्रिय के स्वाभाविक गुण समाज से खाली होते गये। यह स्थिति और दयनीय होती जा रही है। इस व्यथा की चुभन मेरे हृदय को कुरेद रही थी।

कब मेरा समाज करवट बदलेगा? कब इस कौम को वो रोशनी मिलेगी जो इस समाज को जगमग करेगी? कौन इस कुल का दीपक होगा जो अपनी ज्योति से निरन्तर सब घट में ज्योति प्रज्वलित करेगा? मैं और अध्ययन करता गया और गहराई से समाज के भीतरी ढांचे को समझता गया। कहने को सब राजपूत के घर में जन्मे हैं लेकिन उन सभी में क्षत्रियोचित गुणों की कमी दिखाई पड़ती है। क्षत्रिय युवकों में ईमानदारी, अनुशासन, दृढ़ता, वीरता, निर्भयता, सौम्यता, शालीनता, धैर्य, साहस, आत्मविश्वास, त्याग, तपस्या, कष्ट-सहिष्णुता, सच्चाई, क्षमा, शौर्य और विनय आदि क्षत्रियोचित गुण होंगे तभी ये जग वल्लभ, प्रजावल्लभ और बलवान होकर सामर्थ्यवान बनेंगे।

इन्हीं सब व्यथाओं को लेकर पिलानी के छात्रावास से निकली वह पीड़ा श्री क्षत्रिय युवक संघ स्वरूप में मिली, या यूं कहें संघ ने हमें ढूंढा। बाकी संस्थाओं की तरह इसमें भी फार्म भरना, सम्मेलन, अधिवेशन और लोगों को जोड़ना, कुछ ऐसे ही काम चल रहे थे। इसी बीच मैं अपनी कानून की पढ़ाई के लिए नागपुर आ गया। संघ की गतिविधि हेतु सभी साथियों से सम्यक व चिंतन बराबर चलता ही रहता। सभी का जो हाल है उसका जायजा लेता रहता था। हम संघ में मिले तो हैं लेकिन संघ की मूल आत्मा से अभी नहीं जुड़े। संघ भगवान श्रीकृष्ण का स्वरूप है और लगता है मैं तो अब तक अबोध अर्जुन ही हूँ जो उसके आत्मस्वरूप तक नहीं पहुँच सका। यह

बिल्कुल वैसा ही था जब अर्जुन रणभूमि में लड़ने से इन्कार कर देता है तो भगवान कृष्ण उन्हें धर्म ज्ञान करवाते हैं और जब भगवान अपना विश्वरूप अर्जुन को दिखाते हैं, तब उन्हें बोध होता है। इन दो वर्षोंमें मुझे भी यह कमी खल रही थी कि कुछ तो है जो छूट रहा है। मैं वकालत की पढ़ाई कर जब लौटा तो मैने देखा 'श्री क्षत्रिय युवक संघ' अपने विशाल स्वरूप में अपनी बाँहे पसारे खड़ा है, जरूरत है तो हमें अर्जुन बनने की। मैंने अपने साथियों और सहयोगियों की मीटिंग जयपुर में बुलाई और गीता आधारित धर्म, कर्म, शौर्य, बोध वाली मनोवैज्ञानिक सामुहिक संस्कारमयी कर्मप्रणाली उनके समक्ष प्रस्तुत की। सबकी सहमति से संघ का मूल स्वरूप कर्म में उतरा। सारी चिंता, व्यथा और कार्य को प्रभु के श्री चरणों में समर्पित कर दिया है- हे प्रभु- 'क्षत्रिय कुल में प्रभु जन्म दिया तो क्षत्रिय के हित में जीवन बिताऊँ' के रूप में आशीर्वाद लेकर दूसरे ही दिन संघ का पहला सात दिवसीय संस्कार प्रशिक्षण शिविर जयपुर में प्रारम्भ हुआ। इन सात दिनों में मैंने और मेरे सहयोगियों ने सच्ची निष्ठा और सद्भाव से इस यज्ञ कुण्ड में आहुति दी और संघ की सच्ची आत्मीयता में स्वयं को ढाल दिया। शिविर बहुत मायनों में हमारी चेष्टा से भी ज्यादा प्रभावित रहा। और अब हम संघ में दैनिक शाखाओं, शिविरों, सम्मेलनों व क्षत्रिय कुल के महान महापुरुषों, महान योद्धाओं की जयंतियाँ मनाने के माध्यम से संघ को गीता के पदचिन्हों पर आगे बढाते रहे। इस प्रकार संघ अब नए स्वरूप में कार्य कर रहा था जिसमें

एक ध्येय, एक मार्ग
एक नेता, एक ध्वज
एक विचार, एक भाव

संगठन के इस मूलमंत्र के साथ संघ सही दिशा, सही मार्ग पर अग्रसर है। लक्ष्य दूरगामी अवश्य है पर यही एकमात्र अन्तिम उपाय है। यह सब कह देने में जितना आसान है, उतना आसान नहीं। अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ साधना मार्ग में आई। अपने ही समाज के लोगों द्वारा तिरस्कार, आलोचनाओं की कथाएँ भी रची गई। कभी गालियों की बरसात भी। अलग-अलग ढंग के विरोध को सहना पड़ा है। परन्तु हम सब संघ बंधु इस ईश्वरीय कार्य में लगे रहे, बिना किसी भय के। क्योंकि मुझे अपने असत्य में जितनी निष्ठा है, उतनी विरोधियों को अपने सत्य में भी नहीं है। फिर सिद्धान्तहीन विरोधियों के विरोध का कैसा भय? 'भय उसी से भय खाता है जो भय से भय नहीं खाता हो।'

कुछ समय वकालात भी करी मगर जैसे रास नहीं आ रहा हो। फिर बाड़मेर वासियों के प्रेम ने मुझे नगर पालिका अध्यक्ष के रूप में चुन लिया और पिताजी स्व. ठा. श्री बलवंतसिंह जी के बाड़मेर के घर पर पुनः लोगों का जमघट सजने लगा। यह सब देख माताजी का मन हर्ष से भर गया। सब के लिए मैं तनसिंह जरूर था पर माँ के लिए आज भी मैं तणेराज ही था।

इधर संघ अपना कार्य सक्रिय रूप से कर रहा था। गाँव-गाँव में अपनी सात्विक सौरभ फैला चुका था। संघ आम लोगों की जुबान तक पहुँच चुका था। जोधपुर महाराजा के निर्देश पर विधानसभा चुनाव में खड़ा हुआ और स्वयंसेवकों तथा जनसमूह के प्रेम से विजयी हुआ। राजनीति मेरे संघ कार्य में सहयोगी बनी रही। आदरणीय आयुवानसिंह जी को संघप्रमुख का दायित्व दिया गया। सन् 1955-56 में संघ प्रमुखश्री द्वारा भूस्वामी आंदोलन की नींव रखी गई। संघ प्रमुखश्री के आह्वान पर सिपाही के रूप में आ कुदा रण में। संघ के प्रयत्नों से आम समाज भी आन्दोलन से जुड़ा। 1957 में जनमानस ने पुनः प्रेम पूर्वक विधायक चुना। 1962 में तथा 1977 में जनमत ने मुझे सांसद बनाया। भारतीय संसद में राजनीति का कार्य हो चाहे, पर ईश्वर की कृपा से

समाज का दायित्व निभाने का ही मेरा कार्य बना रहा। परमेश्वर की प्रेरणा ही थी कि अपने दायित्व को निष्ठापूर्वक निभाने में मेरी बीमारियाँ भी बाधक नहीं बन सकी। चुनाव में हार-जीत सभी पहलुओं को देखा मगर जीत का अभिमानी भाव कभी खुद पर हावी नहीं होने दिया और न ही हार मुझे कभी विचलित कर पाई। रुककर चलना, गिरकर उठना तो बालपन से ही सीख लिया था।

1979 में जब बुलावा आया तो मैं हर्ष से माताश्री से आज्ञा ले उनकी ही गोद में गहरी नींद में सो गया। उस दिन की उस नींद में इतनी शान्ति थी कि मेरा फिर कभी उठने का मन नहीं हुआ। माँ भगवती के आशीर्वाद से समाज के लिए जो व्यथा थी वो पीड़ा मेरे हृदय में अब पुष्प का रूप धारण कर चुकी थी।

संघ निरंतर क्षत्रिय युवकों में संस्कार की ऊर्जा भर समाज कल्याण पथ पर चलते हुए अपना भव्य रूप धारण कर रहा था। स्वर्ण जयंती व हीरक जयंती में सभी वर्गों के लोगों को एक ध्वज, एक प्रांगण में, एक उमंग, एक उत्साह और उल्लास में देख मेरा मन मयूर नृत्य करने लगा।

अब संघ का कार्य केवल राजस्थान तक ही सीमित न होकर भारत के अधिकांश राज्यों और यहाँ तक कि विश्व पटल पर भी नियमित शाखाएँ देख हृदय पुलकित हो जाता है। 'तन' की व्यथा, मेरी व्यथा अब अनेक-अनेक हृदयों में बस कर उन्हें कर्मरत बना रही है। जिस कलम की आत्मा में विराजित हो मैं अपनी व्यथा का वर्णन कर रहा हूँ, वह भी बेंगलुरू (कर्नाटक) से मेरे इस पथ पर चल रहे स्वयंसेवक की है। ❍

पृष्ठ 13 का शेष

खंडहर बता रहे वैभव की गाथा

9. ध्रुवराज– 'बीकानेर राज्य का इतिहास' में लिखा है कि 'ध्रुवराज बड़ा पराक्रमी राजा था। उसने कौशल और उत्तराखण्ड के कई राजाओं को परास्त किया। उसका राज्य रामेश्वर से अयोध्या तक फैला हुआ था।' वि.स. 850 के एक दानपत्र के आधार पर 'राष्ट्रकूटों का इतिहास' में लिखा है कि 'गोविन्दराज द्वितीय की शिथिलता के कारण राष्ट्रकूट राज्य को दबा लेने के लिये उद्यत हुए अन्य लोगों को देखकर ही उस पर (ध्रुवराज ने) अधिकार किया था।''

10. गोविन्दराज तृतीय– ध्रुवराज का अज्ञाकारी योग्य पुत्र गोविन्दराज तृतीय दक्षिण में राष्ट्रकूटों के इस सुदृढ राज्य का उत्तराधिकारी बना। इसके सम्बन्ध में अन्य सामग्री के अतिरिक्त ताम्रपत्र भी मिले हैं जो राज्य की समस्त जानकारी प्रदान करते हैं। इस शक्तिशाली शासक का उत्तर में विंध्य एवं मालवे से लेकर दक्षिण में कांचीपुर तक के शासक आज्ञा का पालन करते थे। 'बीकानेर राज्य का इतिहास' में लिखा है कि 'तुंगभद्रा, वेंगी, गंगवाडी, केरल, पांड्य, चोल और कांची के नरेशों को परास्त कर उसने सिंहल के राजा को अपने अधीन किया। फिर उसने प्रतिहार राजा नागभट को हरा कर मारवाड़ से भगा दिया। गोविन्दराज तृतीय के 9वें ताम्रपत्र वि.सं. 869 से जानकारी प्राप्त होती है कि गुजरात के मध्य और दक्षिणी भाग (लाट देश) को विजय कर अपने भाई को यह राज्य दिया जिससे गुजरात में दक्षिण के 'राष्ट्रकूटों' की दूसरी शाखा चली थी।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर इतिहासकारों ने यह प्रमाणित किया है कि दक्षिण के शक्तिशाली राष्ट्रकूट राजा गोविन्दराज तृतीय की राज्य विस्तार योजना से गुजरात के अतिरिक्त राजस्थान का क्षेत्र भी प्रभावित हुआ था।

(क्रमश:)

राम प्रसाद बिस्मिल थे तंवर राजपूत

– युधिष्ठिर

एक षड़यंत्र के तहत राम प्रसाद बिस्मिल को जान-बूझकर ब्राह्मण बताया गया है। जब तलवार से युद्ध नहीं जीता गया तो कलम का सहारा लिया गया। जब तलवारों से मान मर्दन नहीं हुआ तो घटनाओं को छुपाया गया। राजपूत तो स्वतंत्रता सेनानी नहीं थे यह झूठ और इसी झूठ की आड़ में राम प्रसाद बिस्मिल को ब्राह्मण घोषित किया गया। जहाँ थोड़ी सी पोल लगी उसी को पकड़कर दुष्प्रचार किया गया। यह जघन्य अपराध है, अक्षम्य पाप है। हमें लगता है महापुरुष तो चले गये। ईश्वर कहीं नहीं गया है, तुम्हारे सिर पर तलवार लटक रखी है, वह माफ नहीं करेगा। देखते रहो क्या दुर्गति होती हैं तुम्हारी।

अगर ये ब्राह्मण ही होते तो इनके सभी वैवाहिक सम्बन्ध राजपूतों में क्यों होते? इनके दादा ठाकुर नारायण सिंह जी तंवर का विवाह आगरा जिले के जोधपुरा गाँव की परिहार कन्या विलासीदेवी के साथ हुआ था। रामप्रसाद बिस्मिल के पिताजी और ठाकुर नारायण सिंह जी के इकलौते पुत्र मुरली सिंह का विवाह आगरा जिले के गाँव गुलाबपुरा की कन्या मूलमती देवी से हुआ था। स्वयं इनका परिवार इस विषय पर हैरान है कि इन्हें धोखे से ब्राह्मण क्यों बनाया जा रहा है। उपर्युक्त वैवाहिक सम्बन्धों के अतिरिक्त इनकी तीनों बहिने राजपूतों में ब्याही है। इनकी बहिन श्रीमती शास्त्री देवी जिला मैनपुरी में गाँव कोसमा के जादौनों में ब्याही थी। इनका एक लड़का हरिश्चन्द्र व नाती ऊदल सिंह, नेत्रपाल सिंह, उदयपाल सिंह तथा रामपालसिंह हैं, इनका बहुत बड़ा परिवार है। इनमें से कुछ अपने गाँव कोसमा में कृषि करते हैं और कुछ दिल्ली में नौकरी अथवा अन्य व्यवसाय।

कोई भी उपर्युक्त तथ्यों पर ग्राम कोसमा जिला मैनपुरी (उत्तर प्रदेश) में, जाकर शास्त्री देवी के परिजनों से या ग्राम रूअर बरबई जिला मुरैना (मध्य प्रदेश) में बिस्मिल के परिजनों से पूछताछ कर सकता है। संघशक्ति सितम्बर, 1985 में प्रकाशित लेख अमर शहीद ठाकुर राम प्रसाद बिस्मिल में शास्त्री देवी जी का पता भी दिया गया था और लिखा गया था कि स्वयं शास्त्री देवी जी से भेंट की जा सकती है। पता यह है ''WZ 14 बाल उद्यान रोड़, उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059''।

तो फिर गड़बड़ कहाँ हो गई। इसके लिए शुरुआत में जाना होगा। श्री राम प्रसाद बिस्मिल का जन्म मध्य प्रदेशान्तर्गत जिला मुरैना तहसील अम्बाह के रूअर बरबई गाँव में ठाकुर मुरलीसिंह तंवर के घर ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी वि.स. 1954 में हुआ था। आपकी माता मूलमती देवी थी जिनसे कुल चार संतान उत्पन्न हुई। ज्येष्ठ पुत्र थे रामप्रसाद बिस्मिल और छोटी तीन पुत्रियाँ जिनमें सबसे बड़ी पुत्री और रामप्रसाद बिस्मिल की छोटी बहिन है श्रीमती शास्त्री देवी।

रामप्रसाद बिस्मिल बचपन से ही उदण्ड स्वभाव के थे जिनकी गतिविधियों को सबसे पहले भांपा प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री गेन्दालाल दीक्षित ने। इनके हौसले को देखकर इन्हें उत्साहित किया गया। इन्होंने अपने गाँव में छोटे-छोटे बच्चों का क्रान्तिकारी दल बना लिया और ब्रिटिश सरकार को जड़ों से उखाड़ फेंकने के लिए योजनाएँ बनाने लगे।

गेन्दालाल दीक्षित की गतिविधियों से सरकार पहले से सतर्क थी। अतः इस क्रान्तिकारी संगठन को देखकर पुलिस और भी अधिक चौकस हो गयी। फलस्वरूप पुलिस ने ग्रामवासियों और ठा. नारायणसिंह जी को तंग करना शुरू कर दिया। घर की आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी। गाँव वाले रोज आते और झगड़ा करके जाते। सबने एक साथ सांठ-गांठ का रूप लिया। आर्थिक कमजोरी, पुलिस व गाँव वालों से तंग आकर इस परिवार ने गाँव छोड़ने का फैसला ले लिया। गाँव छोड़कर यह परिवार शाहजहांपुर आ गया।

नारायण सिंह के ननिहाल से एक ब्राह्मण लड़का यहाँ थानेदार था। नारायण सिंह जी से पहले से परिचित थानेदार

ने इनकी मदद की और सभी से इनका परिचय चाचा जी कहकर करवाया। वहाँ के सहायक जेलर (जो ब्राह्मण था) से कहकर इन्हें वहाँ नौकरी दिलवा दी और वहीं एक मन्दिर में इनके रहने की व्यवस्था भी कर दी। इस नौकरी से जो आय हुई उससे ठाकुर साहब ने दो गायें खरीद ली जिनकी सेवा का भार इनके पुत्र मुरली सिंह ने सम्भाला।

स्पष्ट है सर्वप्रथम ब्राह्मण थानेदार ने नारायण सिंह जी को चाचा जी कहकर सम्बोधित किया। तत्पश्चात् वे ब्राह्मण जेलर के सम्पर्क में रहे। इनका परिवार मन्दिर में रहता था। इनके पिताजी गायें चराते थे। घर की सभी महिलाएँ धार्मिक विचारों की थी। उनकी अधिकांश दिनचर्या मन्दिर में पूजा-पाठ में ही बीतती थी। यहीं से ब्राह्मण होने की भ्रान्ति ने रंग पकड़ा। लोगों ने ठाकुर नारायणसिंह को नारायण दत्त और मुरली सिंह को मुरलीधर कहना शुरू कर दिया। रामप्रसाद भी आर्य समाजी स्वामी सोमदेव के सम्पर्क में आ गये थे। आर्य समाज के कार्यकर्ता रामप्रसाद को पंडित कहकर संबोधित करते थे। कोई भी विद्वान चाहे वह किसी भी जाति या वर्ग से सम्बन्धित हो, आर्य समाज में वह ''पंडित जी'' ही कहलाता है। उदार स्वभाव के कारण इस परिवार ने पंडित जी शब्द के प्रति कभी भी आपत्ति नहीं की। किसी अन्य ने भी इस भ्रान्ति के निवारण की कोई कोशिश नहीं की। धीरे-धीरे यह भ्रान्ति पुष्ट होती गई। कई इतिहासकारों ने बिस्मिल का जन्म स्थान भी शाहजहांपुर लिख दिया जो कि सरासर गलत है, गलत जानकारी है।

शाहजहाँपुर आकर इस परिवार की आर्थिक परिस्थितियाँ हल हो गई। राम प्रसाद का यहाँ आकर बड़े-बड़े क्रान्तिकारियों से सम्पर्क हुआ और उनके अन्दर क्रान्ति की सुलगती चिंगारी ने ज्यालामुखी का रूप लिया।

जलियांवाला बाग के नृशंस हत्याकाण्ड के बाद बंगाल की अनुशीलना समिति, सरस्वती समिति, युगान्तर ग्रुप, इस्ट क्लब, सुहृद समिति, मेमन सिंह, बांधव समिति, बैरिसाल, युवा समिति, फरीदपुर, जनमंगल समिति, भारत माता सोसायटी और सेवा समिति आदि अनेक संगठन देश में स्थापित हो चुके थे। देश के युवा अब गांधी जी के अहिंसक आन्दोलन से ऊब चुके थे। अब हर कोई गौरी सरकार से सीधा मुकाबला करना चाहता था लेकिन इसमें सबसे बड़ी रुकावट आई धनाभाव की।

इस आर्थिक बाधा को सन् 1924 में कानपुर में चुनौती दी राम प्रसाद बिस्मिल ने। हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन की स्थापना की और सिरसागंज में प्रथम डकैती डाली। राम प्रसाद ने अपने आपको सीधी टक्कर के लिए तैयार कर लिया था। सरकार इनसे पहले ही खौफ खाती थी। इस घटना के बाद इन्हें पकड़कर जेल में डाल दिया।

जेल में रहकर भी इनकी क्रांति की ज्वाला धधकती रही। यहाँ इन्होंने कलम से आग उगलना शुरू कर दिया। शायरी लिखने का इनको बचपन से शौक था। जेल में रहते हुए इन्होंने 'मन की लहर' पुस्तक लिखी। इसका एक-एक शब्द 'शोला' था जो अंग्रेजी सरकार की जड़ें उखाड़ने के लिए काफी था। अतः गौरी सरकार ने इसे जब्त कर लिया और इसकी प्रतियों को गोरखपुर प्रेस में जान-बूझकर जला डाला। इस पुस्तक से प्रभावित होकर ही इन्हें ''बिस्मिल'' कहा जाने लगा।

जेल से छूटने के बाद भी क्रान्ति की ज्वाला जहन में धधकती रही। लेकिन इस बार फिर धनाभाव का संकट उपस्थित हो गया। अतः पुनः सरकारी खजाना लूटने की योजना बनायी। सरकारी खजाना लेकर रात के आठ बजे रेलगाड़ी हरदोई से लखनऊ के लिये चलती थी। योजना बनाकर अगस्त, 1925 को बिस्मिल और ठाकुर रोशन सिंह सहित दस नौजवान इस गाड़ी में छिप कर बैठ गये। गाड़ी जब काकोरी और आलम नगर स्टेशनों के बीच गहरे जंगल से गुजर रही थी तो जंजीर खींचकर बावन नं. खम्मे के पास उसे रुकवा दिया गया। गार्ड को पिस्तौल की नौक पर भूमि पर सीधा लिटा दिया गया। दो नौजवान हवा में फायर करने लगे। शेष ने गन मार मारकर तिजोरी तोड़ डाली। इस तरह सारा खजाना लूटकर वे सभी चम्पत हो गये।

सरकारी खजाना लूटकर बिस्मिल ने नये हथियार खरीद लिये और क्रान्ति में फिर से तेजी ला दी। इधर पुलिस

ने बिस्मिल सहित सौ संदिग्ध युवकों को पकड़ कर लखनऊ जेल में डाल दिया। वहाँ के सैशन जज की खुली अदालत में लगभग डेढ वर्ष तक मुकदमा चला। सबूत के लिये तीन सौ सरकारी गवाह पेश किये गये। आखिर में राम प्रसाद बिस्मिल, ठाकुर रोशन सिंह, राजेन्द्र सिंह लाहिड़ी और असफाक उल्ला खाँ को फांसी की सजा दी गयी। शेष कई को काला पानी, कइयों को छोटी-छोटी सजाएँ दी गयी।

इस फैसले के विरुद्ध 6 अप्रैल, 1927 को अवध चीफ कोर्ट में अपील की गयी। यहाँ से खारिज होने पर पहले प्रान्तीय गवर्नर और फिर वायसराय की दया प्रार्थना की गयी। लेजिसलेटिव असेम्बली तथा कौंसिल आफ स्टेट के 78 सदस्यों, संयुक्त प्रान्त की कौंसिल के लगभग सभी निर्वाचित सदस्यों ने हस्ताक्षर कर तथा पं. मदनमोहन मालवीय ने वायसराय से व्यक्तिगत रूप से प्रार्थना की कि काकोरी काण्ड के इन चार युवकों को मृत्यु दण्ड से बदल कर कम सजा दी जाये, किन्तु वायसराय टस से मस न हुआ। इसके विपरीत चिढ़ कर उसने सभी जेल सुपरिंटेंडेंटों को आदेश जारी कर दिये कि इन अभियुक्तों को निश्चित समय पर फाँसी दी जाये।

अपील खारिज होने के बाद इनके वकील श्री मोहन लाल सक्सेना (लखनऊ) ने प्रिवी कौंसिल में लंदन अपील की, किन्तु वहाँ से भी खारिज कर दी गयी। और अन्त में 12 दिसम्बर, 1927 को ठाकुर रोशन सिंह को इलाहाबाद में, 17 दिसम्बर, सन् 1927 को राजेन्द्रसिंह लाहिड़ी को गोंडा में, 19 दिसम्बर, 1927 को रामप्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर में तथा असफाक उल्ला खां को फैजाबाद में फांसी पर लटका ही दिया गया। फांसी पर लटकने से पूर्व बिस्मिल ने ये शब्द कहते थे-

''मरते 'बिस्मिल', 'रोशन', 'लहरी', 'असफाक' अत्याचार से।
होंगे पैदा सैंकड़ों इनके रुधिर की धार से।।''

बिस्मिल वह क्रान्तिकारी था जिन्हें ''भयंकर षड़यन्त्रकारी'' और ''निर्दय हत्यारा'' समझ कर सम्पूर्ण ब्रिटिश प्रशासन थर्राता था। सरकार जल्दी इनका (बिस्मिल) का काम तमाम करना चाहती थी। यही कारण था कि उनकी अपील प्रत्येक न्यायालय में खारिज कर दी जाती थी, क्योंकि सरकार को पूर्ण विश्वास था कि यदि बिस्मिल को छोड़ दिया गया तो यह अबकी बार सम्पूर्ण प्रशासन को आग लगा देगा और अंग्रेजों को यहाँ से दुम दबाकर भागना पड़ेगा।

ऐसे वीर महापुरुष की जाति अपने तुच्छ स्वार्थों की पूर्ति व अपनी रोटी सेकने के लिए बदल दी जाती है।

बिस्मिल ने कहा था -

''सर फरोशाने वतन फिर देख लो मकतल में है।
मुल्क पर कुर्बान हो जाने के अरमा दिल में हैं।
तेग है जालिम की यारो और गला मजलूम का।
देख लेंगे होंसला कितना दिले कातिल में है।।
शोरे महशर बाबपा है मार का है धूम का है।
बलबले जोशे शहादत हर रंगे बिस्मल में है।।''

भारत का इतिहास कुटिल षड़यंत्रकारियों ने तोड़ मरोड़कर लिखा है। जो लोग आज हमारे बीच में विद्यमान हैं उन्हीं के तथ्यों को विकृत कर जनता के सामने परोसा जा रहा है। मुस्लिम युग और ब्रिटिश शासन कालीन इतिहास पूर्णत हमारे शत्रुओं द्वारा लिखा गया है। कोई भी इतिहासकार महापुरुष के जन्म, जाति, धर्म अथवा किसी घटना को तोड़-मोड़कर भ्रान्ति फैला कर राष्ट्र के गौरवपूर्ण इतिहास के साथ धोखाधड़ी करने का दुःसाहस करता है वह भी राष्ट्र द्रोही होता है। सच्चे इतिहासकार का यह कर्तव्य है कि वह किसी महापुरुष का जीवन चरित्र लिखे तो वह उसके जीवन के हर तथ्य और हर घटना का गम्भीरता से अध्ययन करे, अन्वेषण करे, इतिहास की कसौटी पर परखे और खरा उतरने पर ही तदुपरान्त उसे लिपिबद्ध कर जनता के सामने प्रस्तुत करे।

रामप्रसाद बिस्मिल को ब्राह्मण बताना न सिर्फ तथ्यों के विरोधी बात है बल्कि एक सोचा-समझा षड़यंत्र है। रामप्रसाद बिस्मिल का जन्म क्षत्रियों के तंवर वंश में हुआ था। इनके परिजन आज भी इनके गाँव में रहते हैं। काकोरी काण्ड के नायक अमर शहीद राम प्रसाद बिस्मिल पूर्ण रूप से क्षत्रिय थे।

संघ के प्रति अनन्य भाव

– रतन कंवर सेतरावा

बालिका शिविर का एक बौद्धिक चल रहा था, शिविर प्रमुख जी बोले– ''संघ का आध्यात्मिक दर्शन'' बहुत गहरा है इसका उद्देश्य परमेष्टि की प्राप्ति है। इस भाव को पाना कठिन है पर एक बार पा जाने पर जीवन आनन्दमय हो जाता है। जैसे–

''ढूंढा तुझको सब जगह
पाया पता तेरा नहीं
जब पता तेरा लगा
अब पता मेरा नहीं।।''

मुझे उनकी यह बात बड़ी प्रभावी लगी। मैंने इसमें संघ के प्रति अनन्य भाव को समझा और पाया कि जब हमारे हृदय में संघ के प्रति निष्ठा गहरी हो जाती है तब ऐसी स्थिति आ जाती है कि संघ और मैं दो नहीं एक ही हैं। किसी सूत्र पर चलते रहना संकल्प शक्ति से ही सम्भव है। संकल्प का अर्थ है– अपने निश्चय पर अडिग रहना। संकल्प में शक्ति अन्तः निहित है जो हमारे भावों को कर्म में बदलती है।

यही शक्ति हम सभी साधकों को संघ मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है। पू. श्री तनसिंह जी ने लिखा है–

''सद संकल्प से यह शक्ति बढ़ती है
और बुरे संकल्प से यह शक्ति घटती है
बुरा संकल्प यह है कि मैं नहीं बढ़ सकता
तो जो बढ रहा है उसे गिरा डालूं।।''

संघ दर्शन सद्–संकल्प की बात करता है जो कर्मण्यता और चेतना से प्रबुद्ध है। संघ त्याग, साधना और कर्तव्यपालन सिखाता है यही कारण है कि यहाँ जीवन बदले जाते हैं। किंकर्तव्यविमूढ और पराभव की पराकाष्ठा पर पहुँची इस महान कौम को अलौकिक संस्कारों से सज्जित करने का काम निरंतर संघ द्वारा किया जा रहा है।

वर्तमान समय में जब इतने मत–मतान्तर, संगठन, विचार, ढकोसले हमें भटकाते हैं वहीं संघ व्यष्टि से समष्टि और फिर परमेष्टि तक पहुँचाने का बड़ा सरल, सहज व सुन्दर मार्ग दिखाता है।

आज, जहाँ वैयक्तिक शक्ति क्षीण हो रही है वहाँ 'संघेशक्ति कलौयुगे' की बात कही गई है। गुणों के उपार्जन के लिए श्री क्षत्रिय युवक संघ से अधिक कोई सरल मार्ग आज के युग में नहीं हो सकता।

अतः संघ ने जो एक मार्ग हमें दिखाया है उसके प्रति अनन्य भाव हमारे हृदय में यदि जग जाए तो जीवन–पथ में आने वाली सभी बाधाओं को हल व सभी प्रश्नों के उत्तर वैसे ही मिलते जाएंगे जैसे अनन्यभाव के कारण कुरुक्षेत्र में अर्जुन को श्री कृष्ण द्वारा मिले थे।

पू. श्री तनसिंह जी ने अपने एक लेख में लिखा–

''हमारे नए भविष्य की कल्पना का यह बुनियादी ढांचा है, यही मेरा सपना है, यही मेरा संकल्प है और ऐसे ही लोगों के लिए है-मेरी खोज। जो इस स्वप्न और संकल्प को सत्य सिद्ध कर सकें।।''

तो अब समय है– पूज्यश्री के इस कथन पर मनन करने का-कि क्या मैं उनकी खोज का वही सच्चा साधक हूँ?

❍

मन में कर्म के लिए प्रेम होना चाहिए और वह कर्म जिसके लिए करना हो उसके लिये भी मन में अपार प्रेम होना चाहिए। – साने गुरुजी

गतांक से आगे

वैभव से वैराग्य

– राजेन्द्र सिंह बोबासर

सिद्धार्थ चले जा रहे थे, चलते चलते वे सघन वन प्रदेश में पहुँचे गये। सिद्धार्थ के गृह त्याग की घटना बौद्ध-धर्म में अति महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इस घटना को बौद्ध धर्म में 'महाभिनिष्क्रमण' कहा गया है। बौद्ध परम्परा में इसे महान त्याग भी कहा गया है। वन प्रदेश में उन्हें एक आश्रम दिखाई दिया, वे वहाँ गये, उन्होंने देखा कि आश्रम का वातावरण बड़ा मनोरम था, आचार्य यहाँ शिष्यों के साथ तपश्चर्या में लीन रहते थे। सिद्धार्थ कुछ समय यहाँ विश्राम कर चिंतन-मनन करने लगे।

उधर कपिलवस्तु में सिद्धार्थ के गृह-त्याग से अफरा-तफरी मच गई। राजा शुद्धोधन ने राजकुमार की खोज में सैनिकों व राज अधिकारियों को चारों दिशाओं में भेजा। इन्हीं में से एक सैन्य टुकड़ी राज आमात्य के नेतृत्व में उक्त आश्रम में पहुँची, जहाँ सिद्धार्थ तपश्चर्या में लीन थे। आमात्य ने राजकुमार सिद्धार्थ को कपिल वस्तु लौटने का विनम्र निवेदन किया तथा पिता व परिवारजन की व्याकुल स्थिति बताई। सिद्धार्थ ने आमात्य से निवेदन किया कि मैं जिस कार्य के लिए आगे बढ़ चुका हूँ वहाँ से लौटना सम्भव नहीं, आप पिता श्री को मेरा प्रणाम कहें। आमात्य ने कपिल वस्तु आकर राजा शुद्धोधन को सारी बात बताई। राजा को ज्योतिषी द्वारा की गई भविष्यवाणी का स्मरण हो गया तथा एक गहरे उच्छवास के साथ उन्होंने नियति को स्वीकार कर लिया।

सिद्धार्थ ने गृह त्याग से ज्ञान प्राप्ति के 6 वर्षों के बीच कठोर तपस्या की। अनेक आचार्यों से मिले। उनका जीवन इस अवधि में अनेक उतार-चढ़ाव से गुजरा। इस अवधि की कुछ घटनाओं से सिद्धार्थ के ज्ञान प्राप्ति की यात्रा को हम जान सकते हैं-

प्रथम गुरु- आचार्य अलार कलाम - नेपाल की तराई में गमन करते-करते सिद्धार्थ वैशाली गणराज्य पहुँचे। वहाँ आचार्य अलार कलाम का आश्रम था। ये आचार्य सांख्य योग दर्शन के मतावलम्बी थे तथा ध्यान योग के साधक थे। सिद्धार्थ ने इन्हें अपना गुरु बनाया। गुरुजी ने प्रथम बार सिद्धार्थ को पीत वस्त्र धारण करवा कर अपना शिष्य बनाया। यहाँ सिद्धार्थ को ध्यान तथा आत्म संयम के गूढ़ रहस्यों का अभ्यास करवाया तथा 'आकिंचन्यायतन' (शून्यता की अवस्था) की शिक्षा दी।

लगातार अभ्यास से सिद्धार्थ ने इस स्थिति की महारत प्राप्त कर ली। इस अवस्था में मन में उठने वाले संकल्प विकल्पों पर नियन्त्रण कर शून्यता की स्थिति प्राप्त की जाती है। सिद्धार्थ ने इस अभ्यास से सांसारिक विचारों व इच्छाओं से मुक्ति की ओर बढ़ना प्रारम्भ कर दिया पर यह महसूस किया कि यह ज्ञान उन्हें पूर्ण मोक्ष अथवा निर्वाण तक नहीं पहुँचा सकता अतः सिद्धार्थ ने आचार्य से विनम्रता पूर्वक आज्ञा ली।

उद्दक राम पुत्र- आचार्य आलार कलाम के आश्रम से विदा लेकर सिद्धार्थ राजगिरी नगर पहुँचे जहाँ आचार्य उद्दक राम पुत्र का आश्रम था। ये ध्यान योग के महान् तपस्वी थे। इन्होंने सिद्धार्थ को 'नैव संज्ञा ना संज्ञायतन'। 'न तो चेतना न ही अचेतना की अवस्था' की साधना का अभ्यास करवाया। इसमें साधक गहन ध्यानावस्था में पहुँच जाता है तथा समाधि की ओर बढ़ने लग जाता है। सिद्धार्थ ने इस साधना में भी महारत हासिल कर ली पर सिद्धार्थ इससे संतुष्ट नहीं हुए। उनका मत था कि यह ध्यान की अंतिम अवस्था नहीं है। इससे भी उच्चतर ध्यान का अभ्यास किया जा सकता है। इन दोनों आचार्यों के विवरण का स्रोत त्रिपिटक है तथा "The life of the Budda" by Bhekkhu Nanamali में इसका विस्तृत विवरण दिया गया है।

सुजाता की खीर- इस कथनक का ब्यौरा भी

बौद्ध ग्रन्थों में मिलता है। अटूट कथाकार के अनुसार बौध गया से 10 मील दूर सेनानी ग्राम के स्वामी अनाथ पिंडक की पुत्र वधू का नाम सुजाता था। एक बार उसने उपवन स्थित वट वृक्ष को देव रूप में पूजा तथा पुत्र प्राप्ति की मनौती मानी। संयोग वश 1 वर्ष पश्चात उसे पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। मनौती अनुसार उस वट वृक्ष का पूजन कर खीर का प्रसाद चढाने का निश्चय किया। उसने अपनी दासी पूरणा को वट के नीचे साफ-सफाई करने भेजा। संयोगवश सिद्धार्थ वहाँ 45 दिन से निराहार तपस्या कर रहे थे। उनका शरीर सूख कर कांटा बन गया था। चेतना लुप्त प्राय: हो गई थी। दासी उनको देखकर भागी-भागी घर आई तथा सुजाता को सारी घटना बताई। सुजाता ने सोचा कि वन देवता स्वयं प्रकट हुए हैं उसने पूजन की तैयारी, स्वर्ण पात्र में खीर का प्रसाद रखा और उपवन की ओर दासी सहित चल पड़ी। उसने भक्ति भाव से पूजन कर सिद्धार्थ को खीर का प्रसाद देना चाहा पर सिद्धार्थ ने कहा कि वह विशेष प्रयोजन से यह विकट तप कर रहे हैं। सुजाता ने देखा कि सिद्धार्थ की चेतना कभी भी लुप्त हो सकती है। उसने कहा कि जीवित रहकर ही आप अपना प्रयोजन प्राप्त कर सकते हैं। सिद्धार्थ को भी सुजाता की बात सत्य लगी। उन्होंने खीर का प्रसाद ग्रहण किया। सुजाता चली गई। खीर का प्रसाद ग्रहण करने से सिद्धार्थ के शरीर में चेतना का संचार हुआ। यहाँ वीणा के तारों का भी उदाहरण दिया जाता है कि जब सिद्धार्थ तपस्या में लीन थे व क्षीणकाय हो गये थे तो उत्सव पर आई युवतियाँ आपस में बातें करते हुए आ रही थी। वीणा वादन पर बात चल रही थी एक सखी बोली कि वीणा के तारों को इतना भी नहीं कसना चाहिये की वह टूट ही जाये तथा इतना ढीला भी नहीं रखना चाहिये कि ठीक से सुर ही नहीं निकले। सिद्धार्थ सुन रहे थे। उन्होंने विचार किया कि शरीर भी एक वीणा के समान ही है। इसे अत्यधिक कष्ट नहीं देना चाहिये तथा अधिक आराम व सुख-सुविधा भी नहीं देना चाहिये। इसी के आधार पर सिद्धार्थ ने ''मध्यम मार्ग'' के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

सुजाता की खीर खाने के पश्चात सिद्धार्थ ने निरंजना नदी में स्नान किया तथा वर्तमान बोधगया में पीपल के वृक्ष के नीचे एक बार पुनः तपस्या में लीन हो गये। आखिर में 35 वर्ष की आयु में पीपल वृक्ष के नीचे वैसाख पूर्णिमा को उन्हें पूर्ण ज्ञान, मोक्ष (इच्छाओं से मुक्ति) मिल गया तथा वे सिद्धार्थ से बुद्ध बन गये। उसके पश्चात् 80 वार्ष की आयु तक बुद्ध धर्मोपदेश देने के लिए विभिन्न स्थानों पर गये। बुद्ध ने उपदेश जन साधारण की भाषा (पाली भाषा) में दिये। उनके धर्मोपदेश से जन साधारण ही नहीं, बड़े-बड़े श्रेष्ठीगण तथा विशाल साम्राज्यों के अधिपति भी प्रभावित हुए। उन्होंने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया तथा देश-विदेशों में उसके प्रचार में योगदान दिया।

बुद्ध की मृत्यु- एक बार बुद्ध विहार करते-करते पावापुरी पहुँचे। वहाँ चण्ड (चुन्द) नामक सामान्य व्यक्ति ने बड़े भाव से बुद्ध को भोजन करने का निमन्त्रण दिया। भोजन में चण्ड ने मशरूम का साग (सुकर मध्व) खिलाया। मशरूम सूखा हुआ तथा जहर युक्त था। उसी से बुद्ध बीमार पड़ गये। वैद्य जीवक ने बताया कि उनके पूरे शरीर में विष फैल गया है। बुद्ध ने वहाँ से संघ सहित प्रस्थान किया, तीन महिने पश्चात् कुशी नगर के सालवन में 483 ई.पू. बुद्ध की मृत्यु हो गई तथा उन्होंने निर्वाण प्राप्त कर लिया। ❍

चित्त से ही विश्व नियंत्रित होता है, कुशल चित्त की एकाग्रता ही समाधि है। चित्त के वशीभूत हो जाने पर ऋद्धियाँ स्वयं ही प्राप्त हो जाती हैं।

- महात्मा बुद्ध

क्रोध पर विजय

– गंगासिंह साजियाली

हम क्रोध पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं तो इसे पहले समझना पड़ेगा। क्रोध क्या है क्रोध कुरूप है, क्रोध भद्दा है, क्रोध अंधा है, क्रोध भयास्यद है, क्रोध विनाशकारी है। क्रोध मानस का सबसे बड़ा शत्रु है। इसलिए जैसे भी हो हमें क्रोध से बचने का प्रयत्न करना चाहिए। पारिवारिक, सामाजिक आर्थिक, हर दृष्टिकोण से क्रोध हमें नुकसान पहुँचाता है। कोई यदि अपने इस शत्रु को जीत ले तो उसका जीवन पथ सुगम और निष्कंटक हो जाता है, उसके जीवन में सफलता की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं।

हमारे जीवन में घटित घटनाओं को याद करेंगे तो पाएँगे कि क्रोध में बड़ा अनर्थ कर डालते हैं। क्रोध में इतना भला-बुरा बोल जाते हैं कि उससे परिवार में क्लेश उत्पन्न हो जाता है और उम्र भर आपस में बोलना बंद कर देते हैं। उम्र भर बिना बोले ही भगवान के घर चले जाते हैं। क्रोध में कितना बड़ा पाप कर डालते हैं कि उससे परिवार बिखर जाता है।

एक क्रोधित व्यक्ति ने किसी परिचित को पत्र लिखा। वह पत्र गुस्से में लिखा था। पत्र में पचासों गालियों और कठोर भाषा का प्रयोग किया था। जब वह पत्र लिख रहा था तो संयोग से उसका एक परिचित समझदार व्यक्ति वहाँ पहुँच गया। उसने वह पत्र पढा और कहा- अगर तू मेरा कहना माने तो एक बात कहूं? वह बोला- आपकी बात सब मानूंगा पर इस पत्र में कुछ भी परिवर्तन नहीं करूंगा, यह पत्र उसे जरूर दूंगा। उस परिचित ने कहा- ठीक है आपने जो पत्र लिखा है वह उसे अवश्य दें पर उसे डाक में आज नहीं कल डालें और डाक में डानले से पहले उसे दुबारा पढ़कर ही डाक में डालें। वह व्यक्ति बोला- ठीक है, वैसे तो मैं अभी ही इसको डाक में डालने वाला था, मगर अब कल डाल दूँगा।

दूसरे दिन शाम को पत्र लिखने वाला व्यक्ति उस परिचित व्यक्ति से मिलने गया और कहने लगा- वह पत्र तो मैंने कचरे के डिब्बे में डाल दिया। परिचित ने कहा- आपने लिखा तो उसे भेजने के लिए था फिर कचरे में क्यों डाला? वह बोला- क्षमा करना। दूसरे दिन सुबह जब वह पत्र मैंने पढ़ा तो शर्म से मेरा सिर झुक गया। मुझे अपने द्वारा लिखे हुए पर भरोसा ही नहीं हो पा रहा था। पता नहीं मुझ पर कौनसा भूत सवार था, जो मैंने इतनी कड़वी और ओछी भाषा का प्रयोग कर डाला। आपने मेरी आँखें खोल दी। मैं बड़े अनर्थ से बच गया। परिचित ने कहा- जब तुम पत्र लिख रहे थे, तब तुम पर क्रोध का भूत सवार था और तुम्हें यह पता ही नहीं था कि तुम क्या लिख रहे हो और उसका परिणाम क्या होगा। शराबी पर शराब का नशा और क्रोधी पर भूत का नशा सवार होता है। दोनों ही हकीकत से बेखबर होते हैं, इस नशे और बेहोशी में कुछ भी कर डालते हैं और बाद में होश आने पर पश्चाताप की अग्नि में जलते रहते हैं। यही हाल हम सबका है।

क्रोध एक विष है। क्रोध एक विषधर सर्प है, जिसके उठने से आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को भूल जाती है। क्रोध एक विक्षिप्तता है, क्रोध एक रोग है। क्रोध एक दुख की अन्तहीन कथा है। क्रोध एक तात्कालिक पागलपन है। नरक का द्वार क्रोध है। अनर्थों का घर क्रोध है। विवेक का दुश्मन क्रोध है। क्रोध मनुष्य को अंधा बना देता है। क्रोध जब भी आता है, विवेक को नष्ट कर देता है। क्रोध होश की हत्या करके आता है। होश में व्यक्ति क्रोध नहीं करता, बेहोशी में करता है।

क्रोध उत्पन्न कहाँ से होता है? क्रोध हमारे स्वभाव के अन्दर बैठा है। बाहर से तो केवल हवा मिलती है और वह

(शेष पृष्ठ 31 पर)

सभी समस्याओं का समाधान–ईश्वर प्रेम

– रश्मि रामदेरिया

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णम्एवावशिष्यते।।

भगवान अखण्ड तथा पूर्ण हैं और इस कारण उनसे उद्‌भूत सारी वस्तुएँ यथा यह परिवर्तनशील जगत् पूर्ण के रूप में सज्जित है। पूर्ण से जो भी उत्पन्न होता है वह भी अपने में पूर्ण है। चूंकि परमेश्वर पूर्ण है, अतएव उनसे कितनी ही पूर्ण इकाइयाँ उद्‌भूत होने पर भी वे पूर्ण ही बने रहते हैं। ईश्वर पूर्ण हैं, उनकी सृष्टि पूर्ण है और उनकी व्यवस्था पूर्ण है लेकिन हम सभी उत्पात मचाते रहते हैं। मनुष्य को समस्याएँ हल करने की वास्तविक विधि जाननी चाहिये। केवल शुद्ध भक्ति के द्वारा जीवन की सारी समस्याएँ हल की जा सकती हैं। **''बेचारी बाधा को आने भी दो; काँटे चुभें तो चुभने भी दो इन्हें पैरों तले मैं मसलता चलूँ, पहाड़ों के मस्तक झुकाता चलूँ।। मैं गाता चलूँ, मुस्कुराता चलूँ, हर बाधा को मग में कुचलता चलूँ।।''**

समस्याएँ पापकर्मों से उत्पन्न होती हैं। यद्यपि भोजन पर्याप्त है, लेकिन लाभ उठाने के लिए या केवल संग्रह करने के लिये प्रत्येक व्यक्ति आवश्यकता से अधिक संग्रह कर लेता है। जब हम अपनी समस्याएँ स्वयं उत्पन्न करते हैं, तो हमें उनके परिणाम खुद भोगने पड़ते हैं।

लेकिन यह सत्य है कि जो व्यक्ति भगवान् अर्थात् अपने ईष्ट की शरण ग्रहण करता है; उसकी सारी समस्याएँ हल हो जाती हैं। इसलिए चाहे कोई अन्य कारण न भी हो, लेकिन इस कारण से हमें प्रभु की भक्ति सच्चे दिल से प्रेमपूर्वक करनी चाहिये। ज्ञान तथा वैराग्य दोनों ही इस मानव जीवन के लिये आवश्यक हैं। मनुष्य को यह जानना चाहिए कि ''मैं आत्मा हूँ, मुझे इस भौतिक जगत् से कोई प्रयोजन नहीं, लेकिन चूंकि मुझमें इसको विभिन्न प्रकार से भोगने की इच्छा है, अतएव मैं इस शरीर से दूसरे में देहान्तरण कर रहा हूँ। मैं नहीं जानता कि यह कब प्रारम्भ हुआ, लेकिन यह अब भी चल रहा है।'' यही सच्चा, असली ज्ञान है। ''To control thought is the secret of all progress of this earth & that power is yours if you will exercise it.''

''दुःखालयम् अशाश्वतम्''– यह संसार केवल दुःखों से भरा है। भगवान महान् हैं, किन्तु हम लोग भगवान के बारे में तुलनात्मक दृष्टि से सोचते हैं, हम अपनी ही महत्ता की तुलना में विचार करते हैं। हम मन में दृढ़ संकल्प कर लें कि हमें प्रेम विकसित करना है तो हम आने वाली हर समस्याओं का समाधान स्वयं कर सकते हैं, बिना विचलित हुए।

भक्ति की इस विधि को (प्रेम भक्ति) सभी लोग नहीं अपितु जो बुद्धिमान तथा भाग्यशाली हैं, वे ही ग्रहण करते हैं और उनकी एकमात्र अभिलाषा प्रभु की सेवा करने की रहती है। हमें अपनी बुद्धि का उपयोग प्रभु के लिए करना चाहिये। समय का सही सदुपयोग करें।

''लक्ष्य तेरा भव्य सुन्दर; पंथ भी सबसे सुगमतर, विघ्न बाधा देखकर क्यों, भूलते हो स्वगुण राही बन्धनों को तोड़ करके जा रहे किस ओर राही।।''

भगवान (ईश्वर) सर्वोपरि एवं अनन्त हैं, हम क्षुद्र अणु हैं। हमारी स्थिति प्रभु की सेवा करने की है और जब हम अपनी स्थिति के अनुसार कर्म करते हैं तो हम सुखी होते हैं। जब मनुष्य प्रभु की शरण ग्रहण करते हैं तो उसके सारे पाप–कर्मों के फल ध्वस्त हो जाते हैं। किसी प्रकार का भय नहीं करना चाहिये। हम प्रभु की प्रेमभक्ति को अपने हृदय के भीतर उदय होने दें, तो हमारी सारी समस्याएँ हल हो जाएँगी। मनुष्य जितना अधिक जप करता

है, उतना ही अधिक उसका विगत जन्मों का अंधकार दूर होता है। ईश्वर को, स्वयं को, इस संसार को जान सकेगा। प्रभु के साथ हमारा सम्बन्ध क्या है, जान सकेगा कि इस संसार में किस तरह रहा जाए।

मनुष्य भौतिक प्रकृति पर विजय पाने के प्रयास में निरंतर कठिन संघर्ष करता रहता है। हम जो कुछ भी करते हैं उसकी एक प्रतिक्रिया होती है जिससे हम बँध जाते हैं। लेकिन अगर हम प्रभु के लिए कार्य करेंगे (यज्ञार्थात् कर्मणो) तो हम मुक्ति की ओर बढ़ेंगे चाहे कर्म कैसा भी हो। अपने आपको सूक्ष्म कण, प्रभु का अंश समझते हुए प्रभु की सेवा करें। प्रभु, समस्त ब्रह्माण्ड के केन्द्र, वे ही भोक्ता हैं और हम उनके सेवक हैं। जब यह सिद्धान्त स्पष्ट हो जाता है, तो हम मुक्त (समस्त मिथ्या धारणाओं से छुटकारा) हो जाते हैं। न तो कभी मनुष्य शोक करता है न किसी वस्तु की इच्छा करता है। वह प्रत्येक जीव पर समान भाव रखता है और इस अवस्था में वह प्रभु की शुद्ध भक्ति प्राप्त करता है। प्रभु की सेवा प्रेमपूर्वक करनी चाहिए। प्रभु श्रीकृष्ण ने कहा-**''प्रेमाञ्जनच्छुरित भक्ति विलोचनेन, सन्तः सदैव हृदयेषु विलोकयन्ति।''** जिसने कृष्ण के प्रति प्रेम उत्पन्न कर लिया है, वह चौबीसों घण्टे अहर्निश अपने हृदय के भीतर कृष्ण का दर्शन कर सकता है। ❍

धर्म के सिद्धान्त

महर्षि मनु के अनुसार धर्म के दस सिद्धान्त या लक्षण इस प्रकार हैं-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

मनु स्मृति 06/91

1. धृति- धैर्य रखना।

2. क्षमा- शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक सामर्थ्य होते हुए भी क्षमाशीलता का परिचय देना।

3. दम- मन की वृत्तियों का नियंत्रण।

4. अस्तेय- चोरी न करना। चोरी के सात प्रकार हैं- कर चोरी, काम चोरी, दान चोरी, प्रतिज्ञा चोरी, यश चोरी, आचरण चोरी, आत्मसम्मान चोरी।

5. शौच- आंतरिक और बाहरी पवित्रता।

6. इन्द्रिय निग्रह- अपनी इन्द्रियों और इच्छाओं पर नियंत्रण।

7. धी- बुद्धिमता का परिचय देना।

8. विद्या- ज्ञान प्राप्त करना।

9. सत्य- सत्य भावना, सत्य वचन और सत्य कर्म करना।

10. अक्रोध- क्रोध न करना।

केवल लाल-पीले कपड़े पहनने, कंठी, माला, टोपी या क्रास धारण करने, तिलक लगाने, पूजा-पाठ करने अथवा मंदिर, मस्जिद, चर्च, गुरुद्वारे में जाने से कोई व्यक्ति धार्मिक नहीं बनता।

धर्म वह है जो इन दस सिद्धान्तों को आचरण में उतारने से प्राप्त होता है। ❍

अमर पहुँचा अमरापुर

– अजीतसिंह कुणघेर

मरते हैं सभी इस मुल्क में,
चारपाई पर खास।
धरा धरम के काज जो,
मरे वैकुंठ होता वास।

भाषाशास्त्र के मतानुसार संस्कृत भाषा में पालयितु शब्द से गुजराती भाषा में पालियो शब्द प्रचलित हुआ है। पालयितु शब्द का अर्थ होता है धर्म का पालन करने वाला।

प्राचीन समय में जिन वीर पुरुषों ने धर्म की रक्षणार्थ शहीदी स्वीकार की उन्हें जन-समूह के लोग देवता के रूप में स्थापित करके पूजा-अर्चना करते हैं। वैसे तो वीरों की पूजा भारतीय वैदिक समय से होती आ रही है किन्तु यह पालिया अर्थात् स्तम्भ, खांभी बनाना कब से शुरू हुआ, गुजरात में सबसे प्राचीन पालिया कौनसा है, यह खोज-बीन का विषय है।

पालिया खड़ा करने का कारण है, धर्म रक्षा के लिए जो वीर पुरुष शहीद हुए हैं, उनकी स्मृति हमेशा बनी रहे और उनके उस कर्तव्य पालन कर्म से प्रेरणा प्राप्त कर सकें। यह पवित्र कार्य लोगों द्वारा होता है तथा आने वाली पीढ़ी के लिए वीरता परमोधर्म का संदेश देता है। ऐसे वीरों के लिए कवियों ने ठीक ही कहा है,-

जन्में सो मरे सब,
इसमें नहीं विशेष।
जिन्होंने छेदाये शीश
पूजाते इनके पालिया।

यहाँ ऐसे ही एक वीर के बारे में बताया गया है जिनका पालिया आज भी है। जिनके दादोसा राव राघवसिंह जी राजस्थान के गाँव रोडला, तहसील आहोर, जिला जालोर से विक्रम संवत् 1732 में गुजरात के पाटन जिले के गाँव कुणघेर में आकर स्थायी हुए थे। इनके पिताजी मानसिंह जी थे और मानसिंह जी के तीन पुत्रों में सबसे छोटे भाई अमरसिंह जी थे।

गुजरात पाटन तहसील और जिले को कुणघेर गाँव पाटन से 8 किलोमीटर की दूरी पर आया हुआ है जहाँ अमरसिंह जी का पालिया है। यह पालिया अमरसिंह जी की स्मृति में बनाया गया है जिन्होंने गौ रक्षा हेतु शहीदी स्वीकार कर परम वीरता का पद पाया था।

कुणघेर गाँव का प्राचीन नाम कुंजर घर था। कुंजर अर्थात् गज यानी हाथी रखे जाते थे। इसी स्थान को उस समय गजशाला भी कहते थे। समय के बहते बहाव में कुंजर घर शब्द से लोक बोली में कुणघेर बोला जाने लगा। राजपूत युग के सोलंकी कालीन समय में नरेश के हाथी रखे जाते थे, उसी कुंजर घर को आज कुणघेर कहते हैं।

विक्रम संवत की सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में ईसी गाँव कुणघेर में सिंधल राठौड़ से पहचाने जाने वाले अखेराजसिंह जी रोडला के दो पुत्र पीथसिंह जी और राघवसिंह जी थे। उनमें से छोटे भाई राघवसिंह जी गुजरात में स्थित हुए। जिनके पुत्र हुए मानसिंह जी और मानसिंह जी के तीन पुत्र हुए मोयणसिंह जी, नारणसिंह जी और अमरसिंह जी। मानसिंह जी राठौड में एक क्षत्रिय में होने चाहिए वे सभी गुण उनमें विद्यमान थे। साथ-साथ मानसिह जी की धर्मपत्नी देव बा में भी एक क्षत्राणी में जो गुण होने चाहिए वे सभी गुण थे। इसी क्षत्राणी के तीसरे पुत्र के स्वरूप में अमरसिंह जी का जन्म हुआ। अमरसिंह जी में भी माता और पिता के गुण कूट-कूट कर भरे थे।

श्री मद्भागवद्गीता में दर्शित क्षत्रिय के सभी सात गुण समाहित थे।

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धेचाप्यपलायनम्।
दानमीश्वर भावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।

अमरसिंह जी की बाल्यावस्था पूर्ण होते ही, युवावस्था में प्रवेश करते ही अमरसिंह जी का समय तलवारबाजी, घोड़े स्वारी, मल्लयुद्ध आदि उनकी प्रिय प्रवृतियों में बहता गया। वीर वृति धारक अमरसिंह जी की

प्रशंसा चारों ओर होने लगी। अब अमरसिंह जी युवान हो गये थे।

विक्रम संवत की सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में अमरसिंह जी की ख्याति और गुण आसपास के इलाके में रहे लोक हृदय में स्थान ले चुके थे। इस समय भारत में धर्मान्ध शासक मुगल बादशाह औरंगजेब का शासन था। कहा जाता है कि औरंगजेब निर्बल शासक था। उसके शासन में अव्यवस्था फैली हुई थी। परिणामस्वरूप देश में अराजकता थी। चोरी, लूट, डाका पड़ना, गौमाता का अपहरण, विधर्मियों के द्वारा जनता को अपमानित और परेशान करने की घटनाएँ बहुत होती थी।

गुजरात प्रांत का पाटन इलाका मैं भी विधर्मी मियाणा जुथ भी ऐसी प्रवृतियों में सक्रिय था जो किसानों की फसलों को काटकर ले जाते थे। तब इनका सामना करने में आम लोग डरते थे। इन्हीं विधर्मी लोगों ने हिन्दु प्रजा की नींद को हराम कर रखी थी।

विक्रम संवत् 1792 का साल भाद्र माह की शुक्ल चतुदर्शी का दिन। कृषि क्षेत्र में अनाज की फसलें तैयार हो चुकी थी। अमरसिंह जी ने अपनी खेती करने वाले मजदूरों को अपने खेतों में भेज दिये और खुद अपनी ताजण घोड़ी पर सवारी करते हुए अपने खेतों की ओर चल पड़े।

वे कतपुर नामक गाँव के पास से ही गुजर रहे थे। इसी समय कुछ पशु पालक रोते चिल्लाते हुए भागे जा रहे थे। अमरसिंह जी ने पशुपालकों को रोककर पूछा क्यों घबराये हुए हो? और क्यों रोते हो?

पशुपालकों ने कहा मालिक गजब हो गया। हमारी गायों को लूटकर मियाणा मुसलमान लेकर जा रहे हैं। हमें भी बहुत मारे हैं हमारी रक्षा कीजिए।

ठाकुर बचा लीजिए हमारी गौ माताओं को। वे लोग सारी गायों को कत्ल कर देंगे। गौ–माताओं के अपहरण की बात सुनकर अमरसिंह जी का मुखारविन्द क्रोध से लाल हो गया। उनके समग्र शरीर में वीर रस का प्राकट्य हुआ। उन्होंने बिजली की गति से अपनी तलवार पर हाथ डाला और जिस दिशा में मियाणा गायों को लेकर जा रहे थे उसी दिशा में अपनी घोड़ी को दौड़ाई। गायों को लेकर जा रहे मियाणा सरदार और उनके साथियों को हांक की और गायों को लौटा देने का हुक्म किया। वे जब न माने तो एकलवीर अमरसिंह ने बीस मियाणा मुसलमानों के सामने लड़ाई शुरू की।

इस धर्म युद्ध में अमरसिंह जी ने मियाणा मुसलमान सरदार और पाँच मियाणा को धराशायी कर दिया। मियाणा और अमरसिंह जी के बीच उग्र लड़ाई हुई उसमें से भी अमरसिंह जी ने दशों को काट डाले, अब जान बचाकर भागने का कोई चारा बचा नहीं था। बाकी सब छुप गये उसी समय आकस्मिक पीछे से मियाणाओं ने वार किया। अमरसिंह जी का मस्तक कतपुर गाँव की सीमा में कट गया। अब धड़ लड़ रहा था। यह दृश्य देखकर बाकी मियाणा भाग गये। गायें बच गयी और वापस आई। लड़ते–लड़ते उनका धड़ कुणघेर की सीमा में शांत हुआ। उसी जगह आज उनके वंशजों ने उनकी छत्री बनाई है। आज भी उनकी शहीदी के दिन उनकी जीवनी को समस्त लोग याद करते हैं।

उनके वंशज आज भी उस दिन को यादगार दिन बनाकर उनकी पूजा–अर्चना और प्रसाद चढाते हैं। उसी दिन सभी जाति के लोग आज भी आकर नमन करते हैं और प्रसाद ग्रहण करते हैं। ऐसे वीरवर कुलशिरोमणि अमरसिंह जी राठौड़ की वीरता के कुछ दोहे आज भी प्रचलित हैं।

भाद्र पक्ष शुक्ल चतुर्दशी
संवत सत्रह सौ बानवें का साल।
अमर पहुँचा अमरापर
गौ रक्षा के काज

कटा फिर हटा नहीं
अणनम वीर अजोड़
शीश कटा धड़ लड़ा
तुझे रंग है अमर राठौड़

जन्में सो मरे सब
इसमें नहीं विशेष
जिन्होंने सीमा पर छेदाये शीश
पूजाते इनके पालिया ❍

गतांक से आगे

आओ! कुछ चिन्तन करें

– भंवरसिंह मांडासी

पारिवारिक सम्बोधनों में हमारी संस्कृति हो :–

आज पाश्चात्य संस्कृति का इतना प्रभाव पड़ा है कि अनपढ़, पिछड़े और दूरदराज की ढ़ाणियों में रहने वाले बच्चे भी अंग्रेजी सम्बोधनों को अपनाकर माडर्न जीवनशैली से जुड़ रहे हैं। पापा, मम्मी, डैडी, ममा, आन्टी, अंकल, ब्रदर आदि हमारे परिवारों के सम्बोधन होकर अंग्रेजियत की शान को प्रकट कर रहे हैं। इन सम्बोधनों में न मिठास है तो न अर्थ की सार्थकता, बस केवल संकेतात्मक ध्वनि की थोड़ी भिन्नता है। ऐसी स्थिति में हम अपनी संस्कृति को न भूलें और परिवार में इस बात का पूरा ध्यान रखें कि हमारे बच्चे हमारी संस्कृति के गरिमामय सम्बोधनों का प्रयोग करें तथा कुंवरसा, दादाभाई, काकोसा, बाबोसा, बनां, मामोसा, मांसा, भाभा (सासू के लिए सासूसा या माँ लेकिन भाभीसा का प्रयोग नहीं) दादोसा, नानोसा, नानीसा, जंवाई सा। इसी तरह शिष्टाचार में अभिवादन के लिए खम्माघणी, हुकमसा, पधारोसा, बिराजोसा, फरमावोसा, हुकुम करो सा आदि। इन सम्बोधनों में शालीनता, शिष्टता, सभ्यता, सुसंस्कारिता के भाव छिपे रहते हैं। हमारी वेशभूषा (विशेषकर महिलाओं की) हमारी पहचान है, इसे छोड़ें नहीं।

इतिहास से बढ़ती दूरियां :–

प्रायः कहा जाता है कि जिस जाति का अतीत महान है उसका भविष्य भी महान हो सकता है। इतिहास हमें प्रेरित करता। है। अपने पूर्वजों के महान कार्यों से हमारे भीतर गौरव और स्वाभिमान का भाव जागृत होता है। इतिहास हमारे पुरखों के उन जीवन मूल्यों की उदात्तता को प्रकट करता है जिनके लिए वे समाज व राष्ट्र के वंदनीय रहे हैं। इतिहास महज प्रशस्ति गान नहीं है। इतिहास हमें पलायनवादी नहीं बनाता अपितु इतिहास से कोई भी समाज या राष्ट्र बहुत कुछ सीख सकता है, उसकी हताशा व निराशा दूर हो सकती है तो उसे आगे बढ़ने का रास्ता दिखाई दे सकता है।

हमारे पुरखों ने इतिहास रचा। वे एक व्यवस्था के अंग बनकर समाज हित में त्यागी, बलिदानी और प्रजापालक बने रहे हैं। उनकी कहानियाँ आज भी लोक कंठों में जीवित है। समाज उन पर गर्व करता है तो उन्हें स्मरण करके कृतार्थ होता है। लेकिन आज हम इतिहास से दूर जा रहे हैं। इतिहास के प्रति हमारी रुचि घटती जा रही है बल्कि दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि हम इतिहास से कटते जा रहे हैं और यह हमारे लिए दुर्भाग्य की बात है। हम अपनी धरोहर और विरासत को भूलते जा रहे हैं फिर हमारे पास अपना क्या रहेगा? यह ऐसा सवाल है जिस पर हमें विचार करना है इसलिए प्रत्येक राजपूत परिवार को अपने इतिहास का ज्ञान हो, वह इतिहास की पुस्तकें पढ़े और अपने बच्चों को भी इतिहास से जुड़ने के लिए प्रेरित करे।

इस सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि हमारे घर में हमारे महान पूर्वजों के चित्र हों, वंशावली हो, अपने गाँव एवं परिवार की वंशावली हो, क्षत्रिय वंश, शाखा, गोत्र एवं इनसे सम्बन्धित जानकारी हो। महाराज मनु द्वारा प्रतिपादित वैवाहिक व्यवस्था का ज्ञान हो तथा जाति गोत्र निर्धारण के सिद्धान्तों का भी परिचय हो। इतिहास ही हमें हमारी संस्कृति एवं मर्यादा से जोड़ सकता है। इसे भुलाने का मतलब उन संस्कारों से मुक्त होना है और जब वे हमारे संस्कार हम में नहीं होंगे तो हमारी क्या स्थिति होगी, यह सोचने की बात है।

ऐसी स्थिति में कभी–कभार अपने बच्चों के साथ बैठकर इतिहास को दुहराएँ, उन्हें कुछ बताएं और कुछ पढ़ने के लिये भी दें। पहले हमारे पास इतिहास पुस्तकों का

अभाव था लेकिन आज तो काफी पुस्तकें उपलब्ध हैं। हम अपनी संस्कृति को कभी भूलें नहीं, इसके लिए इतिहास ही एकमात्र साधन है।

अपनों से परे : मृगमरीचिका :–

हमारे संस्कारों में आए परिवर्तन के लिए आज का परिवेश, संगति, सम्पर्क आदि भी मुख्य कारण है। पहले हमारी समाज व्यवस्था, आयोजन एवं मेल मिलाप के तीज त्यौहार ऐसे होते थे जिनमें हम हमारे समाज के साथ मिलते–जुलते, सुख–दुख का आदान–प्रदान करते तो हमें आपसी संवाद से अपने बारे में या परिवार की स्थिति के बारे में बहुत कुछ सोचने को मिलता था। समान संस्कारों के कारण वार्तालाप, हास–परिहास, साख–सम्बन्धों, समाज की गतिविधियों आदि के कारण जो जानकारी मिलती उससे हमारा स्वाभिमान एवं जातीय बोध जीवन्तता लिए हुए रहता। लेकिन आज परिस्थितियाँ बदल गई। राजनीति, धंधा, व्यवसाय, जोड़तोड़ के समीकरण आदि के कारण हमें अन्य समाज के लोगों के बीच भी रहना पड़ता है। यह विवशता और जरूरत हो गई है लेकिन सवाल हमारे संस्कारों का है। इस मेल–जोल का अच्छा और बुरा सभी तरह का परिणाम आ रहा है। तात्कालिक रूप में हमें इससे लाभ होता है लेकिन संस्कार निर्माण में परोक्ष रूप से ऐसी परिस्थितियाँ हानिकारक हैं। तो क्या करें अपनों को दरकिनार न करें, उनसे जुड़ें और उनके आयोजन वगैरह में उत्साहपूर्वक भाग लें तथा अपने बच्चों को भी शामिल करें, लेकिन हम अपनों से दूर भाग कर दूसरे समाज में परिस्थितिवश घुल मिल रहे हैं। उनका वर्चस्व हमारे परिवार को प्रभावित कर रहा है, हमारे बच्चे उनके साथ मैत्री सम्बन्ध जोड़कर नई गतिविधियों में लिप्त होते जा रहे हैं, यह निकट भविष्य की दृष्टि से विवेकसम्मत नहीं है।

हमारा सम्पर्क सबसे हो सकता है, इसमें कोई आपत्ति नहीं लेकिन अन्य लोगों की घनिष्ठता हमें अपने संस्कारों से च्युत न करे, इसके प्रति सावधान रहना ही अपने जातीय गौरव की रक्षा करना है। हमें खुली आँखों से समाज की वास्तविकता को देखना है तो दूसरे समाज की घनिष्ठता का परिणाम भी जानना है। **(क्रमशः)**

साभार : **राजपूत निर्देशिका**

पृष्ठ 25 का शेष

क्रोध पर विजय

अपना स्वरूप दिखाने में एक क्षण की भी देरी नहीं करता। एक बात शान्त स्वभाव में कहने पर और वही बात क्रोधी उफान के समय कहने पर विपरीत परिणाम मिलता है। क्रोध छद्मवेशी मित्र बनकर हमारे स्वभाव में रहता है। छद्मवेशी, क्रोध को हम पहचाने और फिर उस पर टिके न रहकर उसको निष्क्रिय करते रहें।

क्रोध से बचने के छोटे–छोटे उपाय भी हम जाग्रत रहकर अपनाने लग जाएँ तो हमारा जीवन ही बदल जाएगा। उसमें न कोई श्रम और न कोई व्यय की जरूरत है। केवल अपने विवेक को जाग्रत रखने की आवश्यकता है। परिवार में जब एक को क्रोध आए तो सामने वाले को चुप हो जाना चाहिए। आग और पानी का यह सामञ्जस्य है। आग से तो आग भड़केगी, क्रोध से क्रोध टकराने पर तूफान आएगा। आग का उपचार पानी है, पेट्रोल नहीं। अहंकार पेट्रोल है। क्रोध की आग पर अहंकार का पेट्रोल डाल देने से क्रोध भभकेगा। घरों में क्षमा, समता, सहनशीलता और सहिष्णुता का जल हमेशा तैयार रहना चाहिए। पता नहीं कब घर क्रोध की लपटों में घिर जाए। यह हमेशा ध्यान रहे कि घर में आग लगने पर पड़ोसी पानी लेकर आने वाला नहीं है। वह तो तुम्हारे घर को जलता देखकर मजा लेगा। पड़ोसी से पानी की उम्मीद कभी न करें। अपने घर में ही पानी की व्यवस्था करके रखने पर क्रोध की आग लगने पर वह पानी काम आएगा। विवेक को जाग्रत रखें तो क्षमा, समता, सहनशीलता, सहिष्णुता का जल घर में रहेगा ही, तब क्रोध की अग्नि कैसे ठहरेगी? नहीं ठहरेगी।

आधुनिक समाज में आस्था का क्षरण: परिवार और सामाजिक मूल्यों की चुनौती

– जितेन्द्र सिंह देवली

हमारे समाज में एक समय था जब परिवार की नींव भगवान के प्रति आस्था और संस्कारों पर आधारित होती थी। घर में पति को परिवार का मुखिया और जिम्मेदारी का आधार माना जाता था। नारी की पूजा देवी स्वरूप में होती थी, और समाज में आदर्श परिवारों का निर्माण होता था। किंतु आज के समय में वामपंथी विचारधारा और अनर्गल बातों ने समाज की इस व्यवस्था को प्रभावित किया है। स्वतंत्रता की आड़ में स्वच्छंदता को महत्त्व मिल रहा है, जिससे परिवार और समाज की संरचना कमजोर हो रही है।

आधुनिकता और आस्था का क्षरण :

आधुनिकता की दौड़ में लोग सामाजिक और धार्मिक आस्थाओं से दूर होते जा रहे हैं। परिवारों में भगवान के प्रति आस्था कम होती जा रही है, और इसका सीधा प्रभाव घर की संरचना पर दिखाई दे रहा है। जब तक घरों में भगवान के प्रति आस्था बनी रही, तब तक घर के मुखिया या पति को भगवान के समान सम्मान मिलता था। लेकिन आज की परिस्थितियों में, पति को केवल एक सामान्य व्यक्ति समझा जाने लगा है, जिससे परिवार की व्यवस्था में गिरावट आई है।

समाज में अनर्गल प्रसारण का प्रभाव :

आज के दौर में सोशल मीडिया, वेब सीरीज, टीवी सीरियल और अन्य डिजिटल प्लेटफॉर्म पर ऐसे प्रसारण की भरमार है, जो समाज की पारम्परिक संरचना और मूल्यों पर प्रश्न उठाते हैं। ऐसे प्रसारण ने लोगों की बुद्धि को भ्रमित किया है. जिसके कारण उनके व्यवहार और सोच में परिवर्तन आ गया है।

उदाहरण के लिये इन बिंदुओं को समझना चहिए :-

1. धर्म और परिवार की आस्था का पतन :

एक समय की बात है, जब रामायण और महाभारत जैसे धार्मिक ग्रंथों के माध्यम से परिवारों में धार्मिक शिक्षा दी जाती थी। लेकिन आज के समय में लोग नेटफ्लिक्स और इंस्टाग्राम पर अधिक समय बिताते हैं। धार्मिक कार्यक्रमों की जगह वेब सीरीज ने ले ली है. जिनमें अधिकतर अनैतिक संबंधों और पारिवारिक विघटन की कहानियाँ दिखाई जाती हैं। यह सोच लोगों में पारंपरिक मूल्यों के प्रति अविश्वास और आस्था की कमी पैदा कर रही है।

2. पति–पत्नी के रिश्ते में गिरावट :

पहले घरों में पति को परिवार का मुखिया माना जाता था और नारी को देवी का रूप। लेकिन आजकल आधुनिक विचारधारा और स्वतंत्रता की आड़ में पति-पत्नी के रिश्ते कमजोर होते जा रहे हैं। आजकल विवाह एक सामाजिक अनुबंध के बजाय व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बंधन में बदलता जा रहा है. जिससे तलाक के मामले बढ़ते जा रहे हैं।

3. परिवारों में संस्कारों का अभाव :

संस्कारित परिवारों में बच्चों को बचपन से ही भगवान के प्रति आस्था और परिवार के प्रति जिम्मेदारी सिखाई जाती थी। लेकिन आजकल, बच्चों को मोबाइल फोन और टैबलेट में व्यस्त रखा जाता है. जहाँ उन्हें संस्कारों की शिक्षा नहीं बल्कि गेम्स और अनर्गल बातों का सामना करना पड़ता है। इससे बच्चों में परिवार और समाज के प्रति जिम्मेदारी की भावना कम हो रही है।

4. सामाजिक व्यवस्था में अव्यवस्था :

पहले समाज में हर व्यक्ति की जिम्मेदारी तय होती थी। पुरुष अपने परिवार की सुरक्षा और आर्थिक जिम्मेदारी निभाता था. जबकि महिलाएँ परिवार की देखभाल करती थीं। लेकिन आजकल, महिलाएँ और पुरुष दोनों समान रूप से काम कर रहे हैं. जिससे घर की जिम्मेदारी में संतुलन की कमी हो रही है। परिणामस्वरूप कोर्ट रूम की फाइलें तलाक और पारिवारिक विवादों से भरी पड़ी हैं, और समाज में तनाव बढ़ता जा रहा है।

''समाधान और सुझाव''

1. धार्मिक और सांस्कृतिक शिक्षा–

परिवारों में धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन और उनसे मिलने वाली सीख को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए। बच्चों को रामायण, महाभारत और गीता जैसे ग्रंथों से नैतिक और धार्मिक शिक्षा दी जानी चाहिए।

2. सोशल मीडिया का सीमित उपयोग–

सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म्स पर बिताए जाने वाले समय को सीमित करना चाहिए। अनर्गल प्रसारण के बजाय, सकारात्मक और शिक्षाप्रद सामग्री का चयन करना चाहिए।

3. पारिवारिक संवाद और सम्मान–

पति–पत्नी के बीच संवाद और एक–दूसरे के प्रति सम्मान बढ़ाना चाहिए। परिवार में सभी सदस्यों की राय का सम्मान किया जाए और महत्त्वपूर्ण निर्णयों में एक दूसरे की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

4. संस्कारों की पुनर्स्थापना–

बच्चों को शुरू से ही अच्छे संस्कार सिखाने चाहिए। माता–पिता को बच्चों के लिए उदाहरण बनना चाहिए और उन्हें परिवार और समाज के प्रति जिम्मेदार बनाना चाहिए।

''स्मरणीय''

समाज में आस्था और संस्कारों की कमी ने परिवार और समाज की संरचना को कमजोर किया है। यदि हम अपने पारंपरिक मूल्यों और धार्मिक आस्थाओं की ओर वापस लौटें, तो परिवारों में फिर से स्थिरता और शान्ति आ सकती है। यह आवश्यक है कि आधुनिकता के नाम पर स्वच्छंदता को बढ़ावा न दें, बल्कि अपने धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों को बनाए रखें, ताकि हमारा समाज और परिवार फिर से मजबूत और खुशहाल बन सके।

❍

सन्दूकों का बन्द रहना अच्छा भी है और बुरा भी। अच्छा वह तब है जब उसके भीतर मात्र कचरा ही हो, क्योंकि बन्द रहने तक लोग कचरे को ही सम्पत्ति मानकर बर्दाश्त करते जाएँगे। हानिप्रद वह तब है जब भीतर कीमती वस्तुएँ हों और उनके न खुले व न प्रकट हुए बिना कीमती होकर भी वस्तुएँ अनुपयोगी बनी रहेगी और हमें भी यह विश्वास नहीं हो सकेगा कि हम कितने धनी हैं। मानव भी इसी अर्थ में एक प्रकार की सन्दूक है और मौन या अभित्पत्ति संदूक का बन्द होना या खुलना है।

– पू. तनसिंह जी

अपनी बात

एक आदमी रास्ते पर खड़ा रो रहा था। उधर से एक संत गुजर रहा था। उसने रोते हुए आदमी से पूछा क्यों रो रहा है? वह बोला–मुझे भगवान उठा ही ले तो अच्छा। मेरे पास कुछ भी नहीं है। आज सुबह से भूखा हूँ, चाय पीने के भी पैसे नहीं हैं। उस संत ने कहा–तू घबरा मत। मैं जानता हूँ कि तेरे पास बहुत कुछ है, मैं उसकी बिक्री करवा देता हूँ। वह व्यक्ति बोला–मेरे पास कुछ भी नहीं है, इस चिथड़े के सिवाय, जो मेरे शरीर पर अटका हुआ है। इसकी क्या बिक्री होगी, खाक। अगर होती हो तो मैं बेचने को तैयार हूँ। संत ने कहा–तू मेरे साथ आ।

संत उसे गाँव के मालिक के पास ले गया। दरवाजे पर ही उसने कहा कि मित्र पहले तुझे बता दूँ, ऐसा नहीं करना है कि बाद में तू बदल जाए। दाम अच्छे मिल जाएंगे लेकिन बेचने की तैयारी पूरी है न? व्यक्ति बोला–क्या पागलपन की बात कर रहे हो, मेरे पास कुछ है ही नहीं, जो बेचने योग्य हो? और इस महल में इन चिथड़ों को खरीदेगा कोई? चिथड़ों की वजह से मुझे भी निकाल कर वे बाहर फेंक देंगे। भीतर प्रवेश भी मुश्किल है। है क्या मेरे पास? उस संत ने कहा कि देख बाद में बदल मत जाना, दाम अच्छे मिल जाएँगे। वह आदमी हँसने लगा। उसने कहा कि व्यर्थ ही मेरी सुबह खराब हुई तुम्हारे साथ आकर। तुम पागल मालूम पड़ते हो। संत ने कहा–मैं जो भी हूँ, तू तो पक्का निश्चय कर, बदलेगा नहीं, और चल मेरे साथ।

गाँव के मालिक के पास जाकर संत ने कहा,–यह आदमी मैं ले आया हूँ, इस आदमी की दोनों आँखें आप खरीद लें। क्या दाम दे देंगे? आदमी घबराया, उसने कहा–आँख! तुम क्या बात कर रहे हो? गाँव के मालिक ने कहा– लाख–लाख रुपये मैंने तय कर रखा है, जो भी आदमी आँखें बेचे। अपने मुसाहिब को कहा–दो लाख रुपये ले आओ। और उस आदमी से कहा–सौदे में कोई एतराज तो नहीं है? पैसा कम तो नहीं है।

उस आदमी ने कहा–आप बात क्या करते हैं? आँखें मुझे बेचनी नहीं है। संत ने कहा–दो लाख रुपये मिलते हैं पागल। तू तो कहता था कि कुछ भी मेरे पास नहीं है। भगवान को कोस रहा था। सुबह–सुबह दो लाख का सौदा करवाए देते हैं। तेरी ज्यादा दाम की मर्जी हो तो ज्यादा बोल दे। कुछ ज्यादा भी मिल सकता है। उस आदमी ने कहा–मुझे बाहर जाने का रास्ता बताओ। मुझे आँख बेचनी नहीं है। उस संत ने कहा–लेकिन लाखों की आँख तुम्हारे पास है, यह देने वाले भगवान को क्या कभी धन्यवाद दिया है? भगवान ने कितना कुछ दिया है हमको, लेकिन क्या कभी इस सम्पत्ति से संतोष भी किया है?

उस आदमी ने आँखें बेचने से इन्कार कर दिया। नहीं बेचता हूँ आँख। लेकिन आज तो लोग आत्मा तक बेच देते हैं। वासना इस कुमार्ग पर चला देती है। जो भगवान ने दिया है, जो हमारे परिश्रम से हमें मिला है, उसमें संतोष रखना ही गलत मार्ग पर चल पड़ने से रोकता है। लेकिन वासना की भूख तृप्ति नहीं होने देती। और इसलिए आत्मा बेचने में भी देरी नहीं करते। पैसों में बिक जाती है, ताम्बे के ठीकरों में बिक जाती है आत्मा।

श्री क्षत्रिय युवक संघ न्यूनतम आवश्यकताओं में जीवन को ढालने वाली प्रणाली है। बीते कल का हिसाब नहीं, आने वाले कल की अपेक्षा नहीं, जो अभी है और यहीं है, इसकी स्वच्छता का कोई अंत नहीं, वह पवित्रतम है। इस संतुष्टि में वासना के सारे रोग और सारे विकार विदा हो जाते हैं। मन स्वच्छ हो जाता है। एकदम स्वच्छ और ताजा हो जाता है।

❍

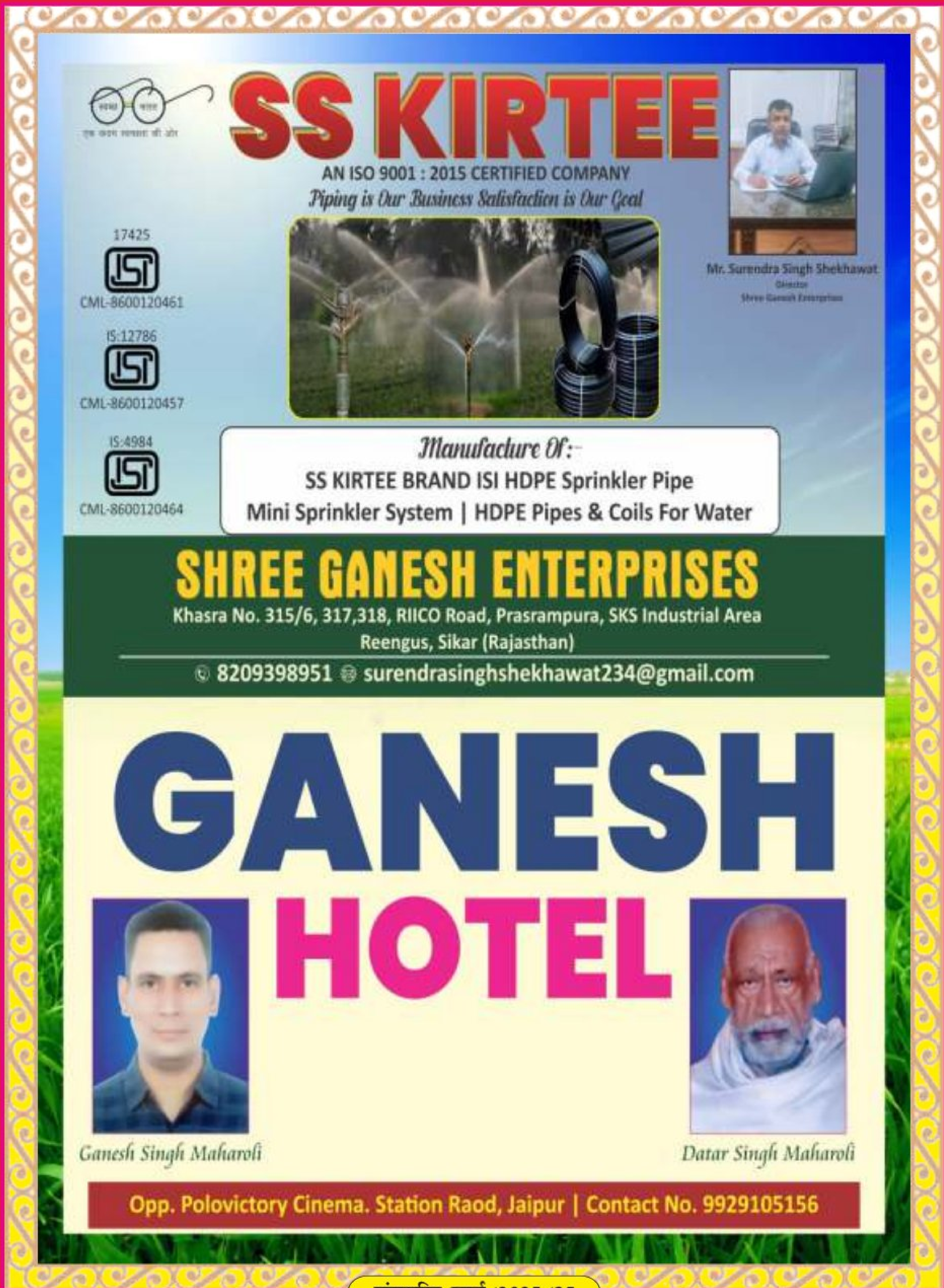
SS KIRTEE
AN ISO 9001 : 2015 CERTIFIED COMPANY
Piping is Our Business Satisfaction is Our Goal
17425
CML-8600120461
IS:12786
CML-8600120457
IS:4984
CML-8600120464
Mr. Surendra Singh Shekhawat
Manufacture Of:-
SS KIRTEE BRAND ISI HDPE Sprinkler Pipe
Mini Sprinkler System | HDPE Pipes & Coils For Water
SHREE GANESH ENTERPRISES
Khasra No. 315/6, 317,318, RIICO Road, Prasrampura, SKS Industrial Area
Reengus, Sikar (Rajasthan)
8209398951 surendrasinghshekhawat234@gmail.com
GANESH
HOTEL
Ganesh Singh Maharoli
Datar Singh Maharoli
Opp. Polovictory Cinema. Station Raod, Jaipur | Contact No. 9929105156

।। जय संघशक्ति ।।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के समर्पित स्वयंसेवकों की ओर से

होली महापर्व की हार्दिक शुभकामनाएँ।

रंगों का यह पावन उत्सव हमारे सामूहिक बल,
नैतिक मूल्यों एवं सांस्कृतिक गौरव को और अधिक सशक्त बनाए।
श्री क्षत्रिय युवक संघ के प्रेरणादायी पथ पर चलते हुए,
हम सभी समाज एवं राष्ट्र की सेवा में निरंतर
समपित रहें।
राष्ट्रभावना से ओत-प्रोत यह पर्व आप सभी के जीवन में
आनंद, सौहार्द एवं मंगलमय भविष्य लेकर आए।

**श्री क्षत्रिय युवक संघ
परिवार**

मार्च, सन् 2025
वर्ष : 62, अंक : 03

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति
ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्...

....

....

श्री संघशक्तिप्रकाशन प्रन्यास (स्वत्वाधिकारी) के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राजेन्द्र सिंह राठौड़ द्वारा भास्कर प्रिंटिंग प्रेस, डी बी कोर्प लिमिटेड, प्लोट नंबर-01, मंगलम कनक वाटिका के पीछे, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, रेल्वे क्रोसिंग के पास, बिलवा, शिवदासपुरा, टोंक रोड़, जयपुर (राजस्थान)-303903 (दूरभाष -6658888) से मुद्रित एवं ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर- 302012 (दूरभाष- 2466353) से प्रकाशित। संपादक राजेंद्र सिंह राठौड़ । Email : sanghshakti@gmail-com | Website : www-shrikys-org